विनोद रस्तोगी

गूंगी मछलियां



उमेश प्रकाशन
५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-६



प्रकाशक
उमेश प्रकाशन
५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली-६

मुद्रक
युगान्तर प्रेस,
मोरी गेट, दिल्ली-६

आवरण-मुद्रक
परमहंस प्रेस
दरियागंज, दिल्ली

संस्करण
१९७१

आवरण
जगदीश चड्ढा

मूल्य
पांच रुपये

Goongi Machhlian
(One-act Plays)
by
Vinod Rastogi
Rs. 5.00

तीन बातें

आजकल कुछ नाटककारों तथा समालोचकों ने 'साहित्यिक नाटक' और 'असाहित्यिक नाटक' का बेतुका प्रश्न उठाया है। जब हम साहित्य की अन्य किसी विधा—कहानी, कविता, उपन्यास—को साहित्यिक और असाहित्यिक के विशेषण का जामा नहीं पहनाते, तो बिचारे नाटक ने ही क्या बिगाड़ा है ? साहित्यिक नाटक का क्या अर्थ है, मेरी समझ में नहीं आता। शायद कक्षा-कक्ष में पढ़ाया जाने वाला नाटक ही साहित्यिक है और मच पर अभिनीत होने वाला नाटक असाहित्यिक। मेरी दृष्टि में तो नाटक के खरेपन की कसौटी क्लासरूम नहीं, थियेटर-हाल है। नाटक का नाटक होना ही काफ़ी है।

पुरुष का पाप, क़सम कुरान की, बहू की विदा, निर्माण का देवता, काले कौए, गोरे हंस और स्वर्ग के खण्डहर के बाद गूँगी मछलियाँ मेरा सातवाँ एकांकी-संग्रह है। इसमें प्रतीकात्मक, सामाजिक, समस्यामूलक, ऐतिहासिक और हास्य-व्यंग्य-पूर्ण नाटक संग्रहीत हैं। कुछ का अनुवाद गुजराती में हो चुका है और कुछ कई नगरों में अभिनीत भी हो चुके हैं। ये एकांकी मंच की कसौटी पर खरे उतरेंगे या नहीं, इसका निर्णय तो निर्देशक और कलाकार ही कर सकते है। अस्तु, नाटक उन्हीं को सौंपता हूँ।

इन एकांकियों के अनुवाद, रूपान्तर, अभिनय आदि के अधिकार सुरक्षित हैं। अभिनय अथवा अनुवाद करने के पूर्व नाटककार की लिखित अनुमति अनिवार्य है।

आकाशवाणी
इलाहाबाद

विनोद रस्तोगी

क्रम

[प्रतीकात्मक एकांकी]

बड़ी मछलियाँ छोटी मछलियों को खा लेती हैं। बिचारी गूंगी मछलियाँ कुछ बोल भी नहीं पातीं। लेकिन क्या समाज में भी ऐसा ही नहीं होता? क्या बड़े लोग छोटों का शोषण नहीं करते?

पात्र-परिचय

गुप्ताजी	धनी ठेकेदार; अवस्था ४५ वर्ष।
श्रीमती गुप्ता	गुप्ताजी की पत्नी; अवस्था ४० वर्ष।
वर्माजी	सरकारी अधिकारी; अवस्था ४० वर्ष।
श्रीमती वर्मा	वर्माजी की पत्नी; अवस्था ३५ वर्ष।
शर्माजी	तथाकथित नेता; अवस्था ५० वर्ष।
रामू	गुप्ताजी का नौकर; अवस्था ६० वर्ष।
रीता	गुप्ताजी की पुत्री; अवस्था ८ वर्ष।
	⊙
स्थान	गुप्ताजी की आलीशान कोठी का गोल कमरा।
	⊙
समय	रात के नौ बजे

[कमरे की सजावट गुप्ताजी की समृद्धि की सूचक है। सुन्दर और सुरुचिपूर्ण फरनीचर हैं। दीवारों पर कलात्मक चित्र टँगे हैं। कार्निस पर बहुमूल्य प्रतिमाएँ हैं। कमरे में तीन द्वार हैं। सामने वाला द्वार डाइनिंग रूम में खुलता है। दाईं ओर का द्वार अन्दर जाने के लिए है और बाईं ओर का द्वार बाहरी बरामदे में खुलता है। तीनों द्वारों पर दीवारों के रंग से मैच करते हुए क़ीमती पर्दे पड़े हैं। एक कोने में रेडियोग्राम और दूसरे कोने में फ़ोन है।

पर्दा उठने पर कक्ष में कोई नहीं दिखाई पड़ता। अन्दर से स्त्री-पुरुषों के मुक्त हास्य की ध्वनि रह-रहकर आती है। पल-भर बाद गुप्ताजी और शर्माजी अन्दर से आते हैं। गुप्ताजी पाजामा, रेशमी कुर्ता और गरम सदरी पहने हैं; शर्माजी काली शेरवानी और सफ़ेद चूड़ीदार पाजामा पहने हैं। सिर पर किश्तीनुमा काली टोपी है।]

गुप्ताजी : कहिए, कोई कमी तो नहीं रही, शर्माजी ?

शर्माजी : (हँसकर सोफ़े पर बैठते हुए) कसर और आपकी दावत में ? अरे, कैसी बातें करते हैं, गुप्ताजी ?

गुप्ताजी : आप तो ख़ैर घर के आदमी हैं। देखिए, वर्माजी को खाना पसन्द आया हो, तब है।

शर्माजी : आपने देखा नहीं था, किस स्वाद से वर्माजी भोजन कर रहे थे ? और उनकी श्रीमतीजी तो प्लेटों पर ऐसे टूटी थीं जैसे वर्षों की भूखी हों। (हँसते हैं)

गुप्ताजी : (शर्माजी के पास ही बैठकर सिगरेट का टिन आगे बढ़ाते हुए) लीजिए, सिगरेट पीजिए, शर्माजी !

[शर्माजी एक सिगरेट निकालकर सुलगाते हैं।]

गुप्ताजी : पसन्द आई ?

शर्माजी : आपकी रुचि का भी जवाब नहीं, गुप्ताजी ! स्टेट एक्सप्रेस ! भई वाह ! शौक करे तो फर्स्टक्लास, नहीं तो······

गुप्ताजी : (बीच में ही) लगता है, अब सब शौकों को तिलांजलि देनी पड़ेगी, शर्माजी ! महँगाई का जमाना और······

शर्माजी : महँगाई आप जैसे लोगों के लिए नहीं है, गुप्ताजी ! उसका प्रभाव तो हम जैसे जन-सेवकों पर पड़ा है। सभ्य समाज में उठने-बैठने के लिए साफ-सुथरे कपड़े चाहिए, जेब में नोटों की गड्डी चाहिए और······

गुप्ताजी : अरे, आपको पैसे की क्या कमी है, शर्माजी ! आप ठहरे ऊँचे नेता; मन्त्री तक आपकी बात मानते हैं—अधिकारियों की कौन कहे। परमिट और लाइसेन्स······

शर्माजी : (बीच में ही) आप तो मेरा स्वभाव जानते हैं, गुप्ताजी ! भारत को आजाद हुए सत्रह साल हो गए; परमिट और लाइसेन्स लेकर लोगों ने खूब जेबें भरीं। मगर कोई मेरी तरफ से उँगली नहीं उठा सकता ! हाँ, यह बात दूसरी है कि अगर मेरे कहने से किसी दूसरे का लाभ होने की सम्भावना हुई तो मैंने बड़े-बड़े मन्त्रियों तक से कहने में संकोच नहीं किया।

गुप्ताजी : आपकी इस परोपकारी वृत्ति के कारण ही तो आपका

इतना मान-सम्मान है, शर्माजी ! नगर में ऐसा कौन बड़ा आदमी है जो आपकी आज्ञा टाल सके ?

शर्माजी : अरे, यह तो आप लोगों की कृपा है । मैं किस योग्य हूँ ।

गुप्ताजी : समय बड़ा खराब आ गया है, शर्माजी ! अब ठेकेदारी में कुछ रहा नहीं; आमदनी घटती जा रही है और खर्च दिन दूने रात चौगुने हो रहे हैं ।

शर्माजी : यह आप क्या कह रहे हैं, गुप्ताजी ? पिछले ठेके में ही आपने लाखों कमाए भगवान की दया से ।

गुप्ताजी : उस कमाई में कितने भागीदार होते हैं, यह शायद आप नहीं जानते, शर्माजी !

शर्माजी : जानता हूँ, भाई, सब कुछ जानता हूँ ।

गुप्ताजी : इसीलिए सोचता हूँ कि इस धंधे के साथ-साथ कोई ऐसा और काम करूँ, जिसमें आमदनी अच्छी हो ! सुना है आजकल एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट में अच्छा जुगाड़ है ।

शर्माजी : ओह···समझा । तभी वर्माजी को दावत दी है ।

गुप्ताजी : दावतें तो कई बार दे चुका हूँ । लेकिन बड़ा काइयाँ आदमी है । पुट्ठे पर हाथ ही नहीं रखने देता ! अब तो तभी काम बन सकता है जब आपकी कृपा हो जाए और आप इशारे से···मेरा मतलब है······

शर्माजी : मतलब तो मैं समझ गया, गुप्ताजी ! आपका काम हो जाएगा लेकिन (स्वर धीमा करके) काम हो जाने के बाद हम जन-सेवकों को न भूल जाइएगा ।

गुप्ताजी : अरे कैसी बातें करते हैं, शर्माजी ! आप तो मेरे बड़े भाई के समान हैं । (हंसते हैं)

शर्माजी : (अट्टहास करके) आपका भी जवाब नहीं, गुप्ताजी ।

[अन्दर से भड़कीले वस्त्र पहने रीता का प्रवेश]

रीता : (पिता के पास जाकर) पापा···पापा !···अंकिल और आण्टी को हमारी मछलियाँ खूब पसन्द आईं !

गुप्ताजी : अच्छा ।

रीता : हाँ, पापा ! आण्टी मम्मी से पूछ रही थीं—मछलियाँ कहाँ से लाईं । आण्टी कहती थीं—हम भी पालेंगी !

गुप्ताजी : अच्छा बेटी, अन्दर जाओ ! चुन्नी से कहना, टॉमी को खाना दे दे और रामू से कहना, कॉफी जल्दी लाए ।

रीता : अच्छा, पापा !

[रीता हँसती हुई चली जाती है ।]

शर्माजी : आपकी मछलियाँ सचमुच बड़ी खूबसूरत हैं, गुप्ताजी ! और संगमरमर का छोटा-सा हौज़ ! पानी के अन्दर जलते हुए रंग-बिरंगे बल्ब । जब नन्ही-नन्ही मछलियाँ पानी में खेलती हैं तो लगता है···लगता है···

गुप्ताजी : रहने दीजिए, शर्माजी ! मछलियों के चक्कर में पड़ने का वक्त कहाँ हमें । हाँ, तो बात पक्की रही ?

शर्माजी : एकदम पक्की !

गुप्ताजी : तो मिल जाए हाथ ।

[दोनों हँसते हुए हाथ मिलाते हैं । तभी अन्दर से वर्माजी के साथ श्रीमती वर्मा और श्रीमती गुप्ता आती हैं । वर्माजी पैण्ट पर बन्द गले का कोट पहने हैं; उनकी पत्नी नाइलोन की साड़ी पहने हैं किन्तु श्रीमती गुप्ता के वस्त्र और अलंकार ऐसे हैं मानो वे अतिथियों पर अपने वैभव और ऐश्वर्य का रोब डालने के लिए ही पहने गए हों ।]

वर्माजी : किस बात पर हैण्ड शेक आई मीन शेक हैण्ड हो रहा है ?

[गुप्ताजी और वर्माजी उठकर खड़े हो जाते हैं ।]

वर्माजी : होर्डिंग और मुनाफ़ाख़ोरी की वजह से। मगर हमारे व्यापारी भाई अपने कर्त्तव्य को······

गुप्ताजी : (बीच में ही) व्यापारी तो मुफ़्त में ही बदनाम हैं, साहब ! दोषी तो सरकार है। उसकी ग़लत नीतियों ने ही देश की अर्थ-व्यवस्था को चौपट कर दिया है।

शर्माजी : अरे भाई, एक-दूसरे को दोष देने से समस्या हल नहीं होगी ! जरूरत है ठोस कदम उठाने की।

गुप्ताजी : (अपनी पत्नी से) भई, जरा देखो तो। कॉफ़ी में क्या देर है ?

वर्माजी : रहने दीजिए ! कॉफ़ी की क्या जरूरत है ?

श्रीमती गुप्ता : (उठकर मुस्कराती हुई) वाह, साहब ! कॉफी के बिना डिनर का मजा ही क्या ? (सामने वाले द्वार की ओर बढ़ती हुई) अभी देखती हूँ।

श्रीमती वर्मा : (उठकर) मैं भी चलती हूँ, मिसेज़ गुप्ता !

[दोनों स्त्रियाँ चली जाती हैं।]

गुप्ताजी : हाँ भाई, बात महँगाई की हो रही थी ! (वर्मा से) आपने फरमाया था कि इस महँगाई ने नौकरी करने वालों की कमर तोड़ दी है। मैं कहता हूँ साहब, कि कमर तो बिज़नेस वालों की टूटी है। (शर्मा से) क्या मैं गलत कह रहा हूँ, शर्माजी ?

शर्माजी : सेण्ट-पर-सेण्ट सही कह रहे हैं। नौकरी करने वालों के लिए तो महँगाई का भत्ता बढ़ भी सकता है, लेकिन व्यापारियों के लिए ऐसे किसी भत्ते की व्यवस्था नहीं है।

[अपनी बात पर प्रसन्न होकर हँसते हैं और एक सिगरेट निकालकर टिन वर्माजी की ओर बढ़ा देते हैं।]

वर्माजी : (सिगरेट सुलगाकर) मगर बिज़नेस-क्लास नपे-तुले

टकों पर अपनी किस्मत तो नहीं बेच देता—हम लोगों की तरह।

गुप्ताजी : और हम कहते हैं हुजूर कि आप लोगों को महीने के अन्त में नपे-तुले टके मिल जाते हैं। हमारा क्या ? साल भर कठिन मेहनत की, पसीना बहाकर पहाड़ खोदा और निकला क्या ? सिर्फ एक चूहा।

शर्माजी : वह भी मरा हुआ।

[तीनों खुलकर हँसते हैं।]

वर्माजी : यू आर ए वण्डरफुल मैन, मिस्टर शर्मा !

शर्माजी : हुजूर, इन्हीं बातों की कमाई है अपने पास ? वरना न तो दूकान है और न दफ्तर।

गुप्ताजी : आपकी दूकान और दफ्तर आपके पोर्टफोलियों में है, शर्माजी।

शर्माजी : सब आप लोगों की दया है। वैसे मैं तो साधारण जन-सेवक हूँ। (बड़े अन्दाज से सिगरेट का धुआँ छोड़ते हैं)

गुप्ताजी : वर्माजी, मैं अभी कुछ देर पहले शर्माजी से अपना रोना ही रो रहा था। ठेकेदारी में अब कुछ रहा नहीं, मगर······

शर्माजी : तो और कोई धन्धा क्यों नहीं करते ? अपने वर्माजी हैं ही, न हो तो एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट का लाइसेंस ही ले लो।

गुप्ताजी : क्यों वर्माजी, मिल सकता है ?

शर्माजी : अरे भाई, क्यों चिन्ता करते हो ? वर्माजी तो अपने ही आदमी हैं। और फिर मैं तो हूँ ही। ऊपर तक कह दूँगा। यह तो घर की बात है। आप चिन्ता न करें ! मैं वर्माजी से डिटेल में बात कर लूँगा।

[श्रीमती वर्मा और श्रीमती गुप्ता का हँसते हुए प्रवेश।]

श्रीमती वर्मा : (अपने पति से) मैं समझ रही थी इनकी साड़ी सिर्फ चार-पाँच सौ की होगी, मगर यह तो पूरे पन्द्रह सौ की निकली।

शर्माजी : (हँसकर) औरतों को साड़ियों और जेवरों के अलावा और कोई टॉपिक मिलता ही नहीं बात करने के लिए।

गुप्ताजी : हम लोगों को भी तो धन्धे के अलावा और कोई टॉपिक नहीं मिलता। (श्रीमती वर्मा से) आपको पसन्द है यह साड़ी ?

श्रीमती वर्मा : (पति की ओर देखकर बैठती हुई) पसन्द तो है, लेकिन इतनी महँगी साड़ी पहनना हमारे बस की बात नहीं।

शर्माजी : आप अपने को अण्डर एस्टीमेट कर रही हैं, मिसेज़ वर्मा ! पन्द्रह सौ क्या, आप चाहे तो पन्द्रह हजार की साड़ी पहन सकती है। क्या मैं गलत कह रहा हूँ, गुप्ताजी ?

गुप्ताजी : आपकी कोई बात कभी गलत होती है, या यही होगी ?

[सामने के द्वार से रामू कॉफी की ट्रे लेकर आता है। उसके बाल पक गए हैं और शरीर दुर्बल है। ट्रे मेज पर रखकर चला जाता है। श्रीमती गुप्ता कॉफ़ी बनाती हैं।]

श्रीमती गुप्ता : आप तो चार चम्मच शक्कर लेंगे, शर्माजी ?

शर्माजी : जी नहीं, केवल एक।

गुप्ताजी : खैर तो है ? पहले तो आप कम-से-कम चार चम्मच लेते थे !

शर्माजी : तब शक्कर की कमी कहाँ थी ?

वर्माजी : (हँसकर) ओह, तो आप शुगर प्रॉब्लेम इस तरह साल्व कर रहे हैं ?

शर्माजी : जी हाँ। यही ठोस कदम है जिनसे समस्याएँ हल की

जा सकती हैं। देखिए, जब से खाद्यसंकट उत्पन्न हुआ, मैंने गेहूँ और चावल का उपयोग कम कर दिया। अब मैं मछली का सेवन करता हूँ।

श्रीमती वर्मा : मैं तो आपको शाकाहारी समझती थी, शर्माजी !

शर्माजी : आपत्ति-काल में सब चलता है; वैसे मछली को जल-तरोई भी कहा जाता है।

[कॉफी के प्याले उठाकर सभी अधरों से लगाते हैं। बीच-बीच में मेज पर रखते रहते हैं।]

गुप्ताजी : अनाज का उपयोग तो हमने भी कम कर दिया है। हम लोग तो फलों का ही सेवन अधिक करते हैं।

वर्माजी : हर आदमी फल नहीं खा सकता।

शर्माजी : अरे साहब, गेहूँ तो फलों से भी महँगा हो रहा है।

वर्माजी : मगर राशन का गेहूँ तो······

श्रीमती गुप्ता : (बीच में ही) उसे कौन खाएगा ? एक बार रामू के छोकरे ने राशन के गेहूँ की रोटी का एक टुकड़ा हमारे टॉमी को दे दिया। सच मानिए, पूरे चार दिन बीमार रहा हमारा टॉमी। अब आप ही बताइए, उस गेहूँ को इन्सान कैसे खा सकता है ?

श्रीमती वर्मा : हम-आप न खा सकें, लेकिन खाने वाले तो खाते ही हैं।

श्रीमती गुप्ता : खाते होंगे। मैं तो भूखी रह जाऊँगी मगर······

गुप्ताजी : राशन का गेहूँ भी तो आजकल नहीं मिल रहा है। रामू बता रहा था कि वह चार-पाँच रोज से खाली हाथ लौट रहा है।

वर्माजी : कार्डों की चैकिंग हो रही है। शायद इसलिए···

[टॉमी जोर से भौंकता है।]

गुप्ताजी : टॉमी क्यों भौंक रहा है ? (ऊँचे स्वर में) रोता, टॉमी को कौन छेड़ रहा है ?

रीता : (दौड़ती हुई आती है) पापा, पापा ! लल्लू टॉमी की रोटी और बिस्कुट लेकर भाग गया !

वर्माजी : यह लल्लू कौन है ?

गुप्ताजी : रामू का लड़का है।

शर्माजी : हद हो गई, भाई ! इन्सान कुत्ते की रोटी चुराने लगा।

श्रीमती गुप्ता : (उठकर ऊँचे स्वर में) रामू ! रामू···!

रामू : (अन्दर से) आया, मालकिन !

गुप्ताजी : (रीता से) जा बेटी ! तू अन्दर जा !

[रीता अन्दर जाती है। रामू सामने के द्वार से आता है।]

रामू : आपने बुलाया था, मालकिन ?

श्रीमती गुप्ता : तुम्हारा लल्लू टॉमी की रोटी और बिस्कुट लेकर भाग गया है।

रामू : (सहमकर) लल्लू···टॉमी की रोटी··· !

गुप्ताजी : हाँ ! तुम उसे कण्ट्रोल में नहीं रखते···! क्यों आया वह यहाँ ?

शर्माजी : लल्लू पागल है क्या ?

रामू : (हाथ जोड़कर) नहीं, सरकार ! भूखा है। चार रोज से राशन नहीं मिला।

श्रीमती गुप्ता : भूखा है तो हम क्या करें ? हमारे टॉमी की रोटी···

रामू : मैं ले आता हूँ क्वाटर से जाकर। आपका टॉमी भूखा नहीं रहेगा।

गुप्ताजी : टॉमी जूठी रोटी खाएगा ? नान्सेन्स !

वर्माजी : जाने भी दीजिए ! मजबूरी इन्सान से सब कुछ कराती है।

गुप्ताजी : मजबूरी नहीं, यह मक्कारी है, वर्माजी ! ही मस्ट बी पनिश्ड !

श्रीमती वर्मा : उसे यहां बुलाकर पूछा तो जाए ! आखिर वह कुत्ते का खाना क्यों ले गया ?

श्रीमती गुप्ता . लल्लू हमारे सवालों का जवाब नहीं दे सकता ।

वर्माजी : क्यों ?

गुप्ताजी : क्योंकि वह गूँगा है ।

श्रीमती वर्मा : गूंगा ?

श्रीमती गुप्ता : जी हां ! और गूंगे लोग बोल नहीं सकते ।

शर्माजी : हौज में खेलने वाली रंगीन मछलियों की तरह ।

रामू : (हाथ जोड़कर विनीत स्वर में) सरकार, इस बार माफ कर दें ? नुकसान के पैसे हमारी पगार से काट लें ।

गुप्ताजी : बड़ा धन्ना सेठ बना है ! हुँ'''नुकसान के पैसे हमारी पगार से काट लें ! आज उसने टॉमी का खाना चुराया है, कल रीता के कपड़े चुराएगा, परसों जेवरों पर हाथ साफ करेगा ।

शर्माजी : ऐसे छोकरे ही तो आगे चलकर डाकू बनते हैं । अपराध के कीड़े उसके खून मे हैं ! अगर अभी नही सुधरा तो हो सकता है किसी दिन......

श्रीमती वर्मा : (पति से) अजी, पुलिस को फ़ोन करो न ! बैठे क्यों हैं ?

रामू : नहीं-नहीं । पुलिस न बुलाएँ । मैं मर जाऊँगा, मालकिन ! लल्लू की माँ .....

श्रीमती वर्मा : लल्लू की माँ जाए भाड़ में । जो किया है, उसका फल भोगना ही पड़ेगा । (डाँटकर)जाओ......! जाकर काम करो !

[रामू हतप्रभ-सा अन्दर जाता है। श्रीमती वर्मा अपने पति को उठने का संकेत करती हैं। गुप्ताजी फ़ोन का चोगा उठाकर नम्बर मिलाने को होते हैं, तभी रीता

फिर भागी-भागी आती है।]

रीता : पापा ! ···पापा···!

गुप्ताजी · (नम्बर मिलाना बन्द करके) क्या हुआ, बेटी ?

रीता : पापा···! बड़ी मछली ने छोटी मछली को ख लिया······!

श्रीमती गुप्ता : यह क्या कह रही है ?

रीता : सच कह रही हूँ, मम्मी ! चलकर देखिए न !

[श्रीमती गुप्ता रीता के साथ तेजी से अन्दर जाती हैं।]

गुप्ताजी : एक्सक्यूज़ मी। अभी आया !

[गुप्ताजी चोंगा मेज़ पर रखकर अन्दर जाते हैं।]

शर्माजी : बेचारी गूँगी मछलियाँ······। अपनी सहायता के लिए किसी को पुकार भी नहीं सकीं !

[श्रीमती वर्मा और वर्माजी मौन रहते हैं। वर्माजी फ़ोन का चोंगा क्रैडिल के ऊपर रखकर पत्नी के साथ बाहर वाले द्वार की ओर बढ़ते हैं। शर्माजी टिन से सिगरेट निकालकर सुलगाते हैं। नेपथ्य में टॉमी भौंकता है और धीरे-धीरे पर्दा गिरता है।]

कस्तूरी

[समस्याप्रधान एकांकी]

मृग की नाभि में ही कस्तूरी रहती है, किन्तु वह उसकी खोज में इधर-उधर भटकता है। मनुष्य का भी यही हाल है। वास्तविक सुख-शान्ति को भूलकर वह कभी-कभी बाहरी आडम्बरों के पीछे पागल हो जाता है।

पात्र-परिचय

मनोज — एक वकील; अवस्था २८ वर्ष।
कस्तूरी — मनोज की पत्नी; अवस्था २४ वर्ष।
अनूप — मनोज का मित्र; अवस्था २७ वर्ष।
रधिया — मनोज की पुरानी नौकरानी; अवस्था ४५ वर्ष।

स्थान — जार्ज टाउन, इलाहाबाद में मनोज की कोठी का गोल कमरा।

समय — सायंकाल चार बजे।

[कमरा सुरुचिपूर्ण ढंग से सजा है। न तो फ़र्श पर फ़र्नीचर का बाहुल्य है और न दीवारों पर चित्रों की भरमार। सामने की कार्निस पर कुछ कलापूर्ण प्रतिमाएँ, कार्निस के ऊपर दीवार पर घड़ी और घड़ी के दाएँ-बाएँ प्राकृतिक दृश्यों के दो चित्र। कमरे के बीच में सोफ़ा सैट, एक कोने में रेडियो और दूसरे कोने में पुस्तकों का रैक। बाईं दीवार में एक खिड़की, दाईं ओर का द्वार अन्दर जाने के लिए और सामने वाला द्वार बाहर जाने के लिए। सोफ़े के पास ही फ़ोन।

पर्दा उठता है। कस्तूरी सोफ़े पर बैठी हुई स्वेटर बुन रही है। गोरा रंग, इकहरा बदन, आकर्षक व्यक्तित्व, किन्तु चेहरे पर उदासी की हल्की छाया। उसकी उँगलियाँ मशीन की तरह चल रही हैं। ध्यान कहीं और है। दीवार-घड़ी चार बजा रही है। कस्तूरी चौंककर दीवार-घड़ी की ओर देखती है और फिर अपनी कलाई पर बँधी घड़ी की ओर। ऊन और सलाइयाँ मेज़ पर रखकर उठती है। उँगलियाँ चटखाकर अँगड़ाई लेती है। तभी अंदर से रधिया आती है। वह साँवले रंग की स्त्री है। चेहरे पर ईमानदारी और श्रमशीलता के भाव हैं।]

रधिया : चार बज गए, बहूरानी ! चाय का पानी चढ़ा दूँ ?
कस्तूरी : नाश्ते का सामान बन गया ?
रधिया : जी हाँ।

कस्तूरी : तुमसे क्या कह गए थे वे ?

रधिया : कहा था कि तीन बजे मेरा एक बचपन का दोस्त आ रहा है। रधिया, उनकी आवभगत में कमी न हो। आज जरूरी मुकदमा है। मुझे आने में देर हो जाएगी।

कस्तूरी : (खिड़की के पास जाकर पर्दा ठीक करती हुई) और अब चार बज गए हैं। अब क्या आएंगे ? उनके दोस्त भी शायद उन्हीं की तरह हैं।

रधिया : तो चाय का पानी न चढ़ाऊँ ?

कस्तूरी : (सोफ़े की ओर लौटती हुई) कोई जरूरत नहीं।

रधिया : आपके लिए भी नहीं ?

कस्तूरी : नहीं। मनोरमा का फ़ोन आया था। मैं उसके यहाँ जा रही हूँ।

रधिया : और अगर बाबूजी आ जाएँ तो…?

कस्तूरी : दस से पहले कभी आएँ हैं कि आज ही आएँगे ?

रधिया : बहूरानी, आप समझाती क्यों नहीं उन्हें ? इस तरह कब तक…

कस्तूरी : (बीच में ही कड़े स्वर में) क्या मतलब है तुम्हारा ? वे अपनी मर्जी के मालिक हैं। मैं क्यों दख़ल दूँ उनके कामों में ?

रधिया : आप घर की मालकिन हैं और…

कस्तूरी : और तुम नौकरानी हो, यह न भूलो। मालिकों की निजी बातों में दख़ल देना ठीक नहीं। जाओ !

[रधिया सहमकर अन्दर जाने लगती है।]

कस्तूरी : सुनो ! यह ऊन और सलाइयाँ मेरे कमरे में रख देना।

रधिया : (ऊन और सलाइयाँ उठाकर) बहुत अच्छा, बहूरानी !

कस्तूरी : (नरम पड़कर) तुम्हें मेरी बात बुरी तो नहीं लगी, रधिया ?

रधिया : (रुद्ध कंठ से) बुरी क्यों लगेगी, बहूरानी ! एक मामूली नौकरानी…

कस्तूरी : ऐसा न कहो, रधिया ! मैं गुस्से में जाने क्या-क्या कह गई। तुम तो सब कुछ जानती हो। बताओ मैं क्या करूँ ? सालभर

हो गया इस घर में ब्याहकर आए हुए। कभी भी तो हँसकर नहीं बोले।

[कस्तूरी का पीड़ित स्वर कांप जाता है।]

रधिया : बोलें कैसे ? उन पर उस चुड़ैल मीना का जादू सवार है।

कस्तूरी : तुमने तो देखा होगा मीना को। क्या बहुत सुन्दर है ?

रधिया : अरे बहूरानी, तुम्हारे पैरों की धोवन भी नहीं है।

कस्तूरी : फिर भी वे अभी तक उसे नहीं भुला पाए। मेरी तो परछाईं से भी दूर भागते हैं। कचहरी से क्लब और क्लब से घर··· वह भी बस अपने कमरे में। बताओ रधिया, मुझमें क्या कमी है ? उनका प्यार पाने के लिए क्या करूँ मैं ?

रधिया : प्यार ऐसे नहीं मिलेगा, बहूरानी ! अधिकार है तुम्हारा। किसी दिन साफ़-साफ़ बातें करो। अगर मीना ही सब कुछ थी, तो ब्याह ही क्यों किया ?

कस्तूरी : मैं···मैं यह सब कहूँ उनसे ?

रधिया : और क्या ?

कस्तूरी : नहीं रधिया, यह मुझसे नहीं हो सकेगा।

रधिया : तो इसी तरह घुलती रहोगी ?

कस्तूरी : शायद घुलना ही मेरे भाग्य में लिखा है··· (घड़ी की ओर देखकर) अच्छा, मैं जा रही हूँ। हाँ, आने वाले दोस्त का नाम नहीं बताया था उन्होंने ?

रधिया : नहीं।

कस्तूरी : तुम तो उनके सभी दोस्तों को जानती हो। तुम्हारा क्या विचार है ? कौन आ रहा है ?

रधिया : एक-दो दोस्त हों तो जानूँ भी। बड़े आदमी के बीसों दोस्त। मैं नहीं जानती, बहूरानी !

कस्तूरी : कहीं मीना ही तो नहीं आ रही है ?

रधिया : अगर उसने इस घर में पैर रक्खा तो टाँगें तोड़ दूँगी। हाँ···

मैं कह चुकी हूँ बाबूजी से।

कस्तूरी : (फीकी हँसी हँसकर) टाँग-वाँग न तोड़ना बिचारी की! (बाहर वाले द्वार की ओर बढ़ती हुई) और हाँ, बैठक का ध्यान रखना!

[कस्तूरी बाहर जाती है। रधिया पलभर अपने स्थान पर खड़ी रहती है। उसके चेहरे पर करुण मुस्कान है। एक लम्बी साँस छोड़कर धीरे-धीरे अन्दर वाले द्वार की ओर बढ़ती है। तभी फ़ोन की घंटी बजती है। रधिया इस अप्रत्याशित ध्वनि से चौंक जाती है। हड़बड़ाकर फ़ोन की ओर बढ़ती है।]

रधिया : (रिसीवर उठाकर) हलो! ···मनोज बाबू की कोठी! कौन ···मनोरमा बीबी! बहूरानी अभी-अभी गई हैं। जी? ··· हाँ···हाँ! *बस पहुँचती ही होंगी? मगर···? नहीं, बाबूजी* अभी कचहरी से नहीं आए। ऐं···? मेहमान? मेहमान भी अभी नहीं आए! जी···। हाँ···। हाँ···! ठीक है। अच्छा।

[रिसीवर रखकर रधिया अन्दर जाती है। क्षणभर मंच खाली रहता है।]

अनूप : (नेपथ्य से) अबे ओ मनोज के बच्चे! अन्दर है क्या?

[अनूप अन्दर आता है। मुँह में सिगरेट दबी है। चेहरे पर मस्ती और लापरवाही के भाव हैं।]

अनूप : अबे सो रहा है क्या? मनोज! मनोज!!

[वह सोफे पर बैठकर मेज पर पैर फैला लेता है और सीटी बजाने लगता है। अन्दर से रधिया आती है।]

रधिया : कौन हैं आप? किसे चाहते हैं?

अनूप : (उछलकर) अरे रधिया! तुम अभी तक जमी हो यहाँ? पहचाना नहीं मुझे?

रधिया : (पहचानकर) अरे! अनूप भैया तुम! तो तुम्हीं मेहमान हो बाबूजी के?

अनूप : (झुककर अभिनय की मुद्रा में) यस माई लेडी !

रधिया : (हँसकर) तुम बिल्कुल नहीं बदले ।

अनूप : गिरगिट की तरह रंग बदलने वाले और होते हैं, रधिया ! अनूप तो कारी काँवरि है जिस पर दूसरा रंग चढ़ ही नहीं सकता। (रधिया हँसती है ।) कहाँ है मनोज का बच्चा ?

रधिया : कचहरी गए हैं । आते ही होंगे ।

अनूप : दोस्त के लिए एक दिन कचहरी नहीं छोड़ सकता ! मेरा तार नहीं मिला था क्या ?

रधिया : कोई जरूरी मुकदमा था । तुम बैठो आराम से । मैं अभी चाय बनाती हूँ ।

अनूप : चाय मैं पीकर आया हूँ ।

रधिया : कहाँ से ।

अनूप : स्टेशन से । वहीं सामान छोड़ आया हूँ । (सोफ़े पर बैठकर सिगरेट सुलगाता है ।)

रधिया : क्यों ? सामान स्टेशन पर क्यों छोड़ आए ?

अनूप : जरूरी काम से बनारस जा रहा हूँ । मनोज से मिलने के लिए ही रुक गया ।

रधिया : लेकिन तुम तो तीन बजे आने वाले थे ।

अनूप : गाड़ी लेट आई तो मेरा क्या कसूर ?

रधिया : लेकिन भैया, ऐसी मेहमानदारी भी क्या ? बरसों के बाद आए हो । बाबूजी के ब्याह में भी नहीं आए । और अब···

अनूप : वापसी में रुकूँगा दस-पाँच दिन । तब जी भरकर खातिरदारी कर लेना । हाँ, यह तो बताओ, तुम्हारी बहूरानी कैसी हैं ?

रधिया : बहुत अच्छी । रूप और गुन दोनों की खान ।

अनूप : तब तो मनोज खूब चाहता होगा उन्हें । (रधिया मौन रहती है) बोलती क्यों नहीं ?

रधिया : अब क्या बताऊँ, भैया ! उनके सिर पर तो मीना का भूत

सवार है। कभी हँसकर नही बोले बहूरानी से। बिचारी मन-ही मन घुल रही हैं।

अनूप : शादी के बाद उसने मुझे लिखा था कि वह मीना को भूलने की कोशिश करेगा और पत्नी को सच्चा प्यार देगा।

रधिया : भैया, तुम समझाओ बाबूजी को। मुझसे बहूरानी का दुख नहीं देखा जाता।

अनूप : कहाँ हैं भाभी जी ?

रधिया : सहेली के यहाँ चली गई है। चार बजे तक तुम्हारी राह देखती रहीं। जब तुम नही आए तो•••

अनूप : कोई बात नहीं।

रधिया : उनकी एक सहेली यहीं ब्याही है। उसी से मन का सुख-दुख कह लेती हैं। बाबूजी को तो कचहरी और क्लब से ही छुट्टी नही मिलती।

अनूप : (उठकर परेशानी से टहलता हुआ) यह मनोज का पागलपन है। आने दो उसे। आड़े हाथों न लिया तो मेरा नाम अनूप नहीं।

[बाहर से मनोज आता है। वह सफेद पैंट और काला कोट पहने है। गले में काली टाई है। हाथ में एक फ़ाइल है।]

मनोज : किसे आड़े हाथों लेने की तैयारी है, अनूप ?

अनूप : तुझे।

मनोज : (फ़ाइल मेज पर रखकर बैठता हुआ) मरे को मारने में क्या मजा है यार ? (रधिया से) बहूरानी कहाँ हैं ?

रधिया : मनोरमा बीबी के यहाँ गई हैं।

मनोज : (बिगड़कर) यह कौन-सी तमीज है उनकी ? घर में मेहमान आए और घर की मालकिन सहेली के यहाँ तशरीफ ले जाएँ।

अनूप : मेरी ट्रेन लेट थी। अभी-अभी आया हूँ। भाभी जी का इसमें कोई दोष नही।

मनोज : चाय का पानी चढ़ा दो, रधिया !

[रधिया अन्दर जाती है। अनूप सिगरेट सुलगाता है।]

अनूप : (डिब्बी मनोज की ओर बढ़ाकर) सिगरेट ?

मनोज : नहीं; वैसे ही कलेजा जल रहा है यार !

अनूप : फ़ायर ब्रिगेड को फ़ोन करूँ ?

मनोज : मज़ाक छोड़। सच, मेरा दिल एक ठंडी आग में जल रहा है। मीना की याद हमेशा पागल किए रहती है। कचहरी-क्लब कहीं भी शांति नहीं मिलती।

अनूप : शांति कचहरी और क्लब में नहीं मिलती, मनोज, घर में मिलती है।

मनोज : घर में ? क्यों हँसी करता है यार ?

अनूप : यह हँसी नहीं है। दीवानगी छोड़कर होश की बात कर। याद है, तूने क्या लिखा था ?

मनोज : याद है। लेकिन लाख कोशिश करने पर भी मैं न तो मीना को भुला सका और न पत्नी को प्यार दे सका।

अनूप : मीना अगर इतनी पसन्द थी तो उससे शादी क्यों नहीं कर ली ?

मनोज : समाज से हार गया।

अनूप : भाभी जी से शादी क्यों की ?

मनोज : पिता जी से हार गया।

अनूप : बुज़दिल ! समाज से लड़ने की तुझमें शक्ति नहीं, पिता का विरोध करने का साहस नहीं, और दावा करता है प्रेमी होने का।

मनोज : मैं कायर हूँ। मैं मानता हूँ···लेकिन···

अनूप : तेरी कायरता की सज़ा भाभी जी क्यों भोगें ? उनका क्या दोष है ?

मनोज : कुछ भी नहीं। लेकिन सज़ा मैं भी तो भोग रहा हूँ। वियोग की आग में निरन्तर सुलग रहा हूँ। प्यासे हिरन की तरह इधर-उधर भटक रहा हूँ लेकिन कहीं प्यास नहीं बुझती।

अनूप : तेरी प्यास कभी नहीं बुझ सकती क्योंकि तू मृगमरीचिका के

पीछे दौड़ रहा है।

मनोज : (दुखी स्वर में) अनूप, तू भी मेरा दर्द नहीं समझता ?

अनूप : समझता हूँ। तेरा भी और भाभी जी का भी। उनका दर्द तेरे दर्द से बहुत बड़ा है। मेरी बात मान। मीना का ध्यान छोड़ दे। तभी तुझे सच्ची शान्ति मिलेगी।

मनोज : तू ऐसी बातें कर रहा है ? तू भी तो एक लड़की से प्यार करता था ! तू तो जानता है प्यार की पीड़ा।

अनूप : जानता हूँ ; इसीलिए कह रहा हूँ।

मनोज : (दोनों हाथों से सिर दबाकर) मेरी समझ में कुछ नहीं आता, मैं क्या करूँ ?

अनूप : (मोटे स्वर में) भूल जा मीना को।

मनोज : लेकिन वह मुझे प्यार करती है।

अनूप : करती थी ; अब उसकी शादी हो चुकी है।

मनोज : जानता हूँ। उसका पत्र आया था और उसने लिखा था कि वह जीवन-भर मुझे प्यार करती रहेगी।

अनूप : शादी के बाद उसका कोई पत्र आया ?

मनोज : नहीं।

अनूप : शायद वह तुझे भूल गई है।

मनोज : ऐसा नहीं हो सकता…कभी नहीं हो सकता। मेरा दिल कहता है…

अनूप : दिल की राहें बड़ी टेढ़ी-मेढ़ी होती हैं, मनोज ! देख, जब भाभी जी तेरी उपेक्षा और घृणा पाकर भी तुझे सच्ची निष्ठा और लगन से प्यार करती हैं तो क्या मीना अपने पति का प्यार पाकर तुझे भूल न गई होगी ?

मनोज : लेकिन मीना और कस्तूरी की क्या तुलना ?

अनूप : कस्तूरी …? (चौंक जाता है)

मनोज : तेरी भाभी का नाम है कस्तूरी। प्रथम प्यार को भुलाना बहुत

कठिन है, अनूप ! मुझे पूरा विश्वास है कि मीना मुझे अब भी प्यार करती है।

[रधिया चाय की ट्रे और नाश्ते का सामान लेकर आती है।]

मनोज : मैं हाथ-मुंह धोकर अभी आया······दो मिनट में।

[मनोज फ़ाइल लेकर तेज़ी से अन्दर चला जाता है। रधिया मेज़ पर चाय की ट्रे आदि रखती है।]

अनूप : तुम्हारी बहूरानी कहाँ की हैं, रधिया ?

रधिया : मेरठ की। क्यों ?

अनूप : कुछ नहीं। वैसे ही पूछा। तुम जाओ। मैं चाय खुद बना लूंगा।

[रधिया अन्दर जाती है। अनूप उठकर टहलने लगता है। तभी बाहर से कस्तूरी आती है।]

कस्तूरी : अनूप···तुम !

अनूप : तो तुम हो श्रीमती मनोज। नमस्ते भाभी जी !

कस्तूरी : (उसके पास जाकर धीमे स्वर में) तुम क्यों आए हो यहाँ ? चले जाओ ! भगवान के लिए चले जाओ ! कहीं वे आ गए तो······

अनूप : मनोज आ गया है।

कस्तूरी : ओह···! तो तुम मुझे कलंकित करके ही मानोगे।

अनूप : (ऊँचे स्वर में) भाभी जी आ गईं, मनोज ! जल्दी आओ।

मनोज : (अन्दर से) अभी आया। कस्तूरी, तुम चाय बनाओ तब तक।

कस्तूरी : मेरे सुखी संसार में आग लगाने क्यों आ गए ?

अनूप : हुं: ! सुखी संसार ! मुझे सब पता है। (अपेक्षाकृत ऊँचे स्वर में) मैं दो चम्मच चीनी लेता हूँ, भाभी जी ! मनोज के बारे में आप जानती ही होंगी।

[कस्तूरी टूटे-से सोफ़े पर बैठकर चाय बनाने लगती है। अन्दर से मनोज आता है। वह कोट और टाई उतार आया है।]

मनोज : (बैठकर) कस्तूरी, यह मेरा बचपन का दोस्त है अनूप… बड़ा मस्त और फक्कड़ ! लेकिन यह रूप तो बाहरी है ! अन्दर बड़ा दर्द, बड़ी करुणा है।
[कस्तूरी चुपचाप चाय बनाती रहती है।]

अनूप : अच्छा-अच्छा, रहने भी दे !

मनोज : अरे, इनसे कैसा पर्दा ! हजरत एक लड़की से प्यार करते थे। समझते थे, वह भी इन्हें चाहती है। लेकिन वह लड़की बड़ी धोखेबाज निकली।

अनूप : (कड़े स्वर में) मनोज…

मनोज : (हँसकर) अब भी दीवाने हो उसके ?
[कस्तूरी का हाथ कांप जाता है। चाय छलककर साड़ी पर गिर पड़ती है।]

कस्तूरी : ओह…!

मनोज : क्या हुआ ? साड़ी खराब कर ली ? टेबिल मैनर्स तो तुम जानती ही नहीं, कस्तूरी !

कस्तूरी : आ'एम सॉरी। (चाय बनाने लगती है)

मनोज : हाँ, तो मैं यह कह रहा था कि वह लड़की बड़ी धोखेबाज निकली। इन्हें धता बताकर दूसरे से शादी कर ली।
[कस्तूरी चाय बनाकर प्याले अनूप और मनोज के सामने रख देती है। अनूप सिगरेट सुलगाता है।]

मनोज : तुम नहीं पिओगी ?

कस्तूरी : मनोरमा के यहाँ पी आई हूँ।

मनोज : लेकिन यह शिष्टाचार के विरुद्ध है। (ऊँचे स्वर में) रधिया, एक प्याला और लाओ !

अनूप : रहने दो, मनोज ! क्यों जिद करते हो ?

कस्तूरी : (उठकर) मेरे सिर में दर्द हो रहा है ! मैं…

मनोज : (हाथ पकड़कर बिठाता हुआ) अरे बैठो भी ! तुम्हारे सिर

में तो रोज ही दर्द रहता है लेकिन अनूप तो रोज-रोज नहीं आएगा।

[कस्तूरी फिर बैठ जाती है। रधिया एक प्याला मेज़ पर रखकर चली जाती है। कस्तूरी अनमने भाव से अपने लिए चाय बनाने लगती है।]

मनोज : तुम अनूप को नहीं जानतीं। अपनी लच्छेदार बातों से तुम्हें इतना हँसाएगा......इतना हँसाएगा कि तुम्हारे सिर का दर्द काफूर हो जाएगा।

[कस्तूरी बिना चीनी डाले ही चाय पीने लगती है।]

अनूप : आपने चीनी तो डाली ही नहीं, भाभी जी!

कस्तूरी : ओह......! (चीनी डालने लगती है।)

मनोज : अच्छा अनूप क्या तू उसी लड़की के नाम की माला जपता रहेगा? कभी शादी भी करेगा या नहीं?

अनूप (गम्भीर स्वर में) मैं शादी कर चुका हूं, मनोज!

मनोज : (विस्मय से) कब? तूने निमंत्रण-पत्र भी नहीं भेजा! कैसी हैं भाभी!

अनूप : बहुत सुन्दर और सुशील!

मनोज : मगर तूने हमें बुलाया क्यों नहीं?

अनूप : चट मँगनी पट ब्याह वाली बात हो गई थी।

मनोज : तुझे अपनी प्रेमिका की याद नहीं आती?

अनूप : नहीं।

मनोज : बड़ा पत्थर है तेरा दिल।

अनूप : मेरी पत्नी भी अपने प्रेमी को याद नहीं करती।

मनोज : (हँसकर) क्या वह भी शादी से पहले किसी को चाहती थी? और तूने यह जानकर भी उससे शादी की?

अनूप : हां! और दो महीने के अन्दर ही मैंने उसे अपने प्यार से जीत लिया है।

[कस्तूरी चुपचाप चाय पीती रहती है। अन्तर में तूफान उमड़ रहा है। लेकिन चेहरे पर तटस्थता का भाव है।]

मनोज : (अपना खाली प्याला मेज पर रखकर) चाय और बनाओ, कस्तूरी ! (कस्तूरी चाय बनाने लगती है) तब तो अनूप, तेरी पत्नी का अपने प्रेमी के प्रति प्यार नहीं, सिर्फ आकर्षण रहा होगा। अगर उसके मन में प्यार होता तो इतनी आसानी से वह अपने प्रेमी को नहीं भूल सकती थी।

अनूप : कौन जानता है !

[कस्तूरी चाय का प्याला आगे बढ़ा देती है।]

मनोज : (चाय का घूंट लेकर) क्या तेरी प्रेमिका भी तुझे भूल गई ?

अनूप : तो क्या गुनाह किया उसने ? (सिगरेट सुलगाकर) शादी के बाद हर पत्नी का धर्म होता है पति को प्यार करना। मैं ठीक कह रहा हूँ न भाभी जी ?

मनोज : ओह…दे आर आल चीट ! तेरी प्रेमिका भी और तेरी पत्नी भी।

अनूप : मैंने भाभी जी से राय माँगी थी, तुझसे नहीं।

मनोज : अरे यह क्या बताएँगी ? यह क्या जाने, प्यार किस चिड़िया का नाम है प्यार की पीड़ा किसे कहते है ?

कस्तूरी : (सहसा उठकर) मेरा सिर फटा जा रहा। आई काण्ट सिट। एक्सक्यूज मी…।

[कस्तूरी तेजी से अन्दर जाती है। मनोज हँसने लगता है।]

मनोज : छुईमुई !

अनूप : इतनी क्रूरता ठीक नहीं, मनोज ! तू क्यों भाभी जी का दिल दुखाता है ?

मनोज : दिल…? मुझे तो शक है कि उसके दिल है भी या नहीं।

अनूप : कभी जानने की कोशिश की तूने ?

मनोज : क्या मतलब ?

अनूप : मतलब साफ़ है ! तू क्यों उनकी ज़िन्दगी नरक बनाए है ?

मनोज : क्या मेरी ज़िन्दगी नरक नहीं है, अनूप ? आज किसकी ज़िन्दगी नरक नहीं है ? हर घर में यही घुटन, यही जलन, यही कलह ! कोर्ट में एक दिन आकर देख, तब तुझे पता चले । डाईवोर्स के ऐसे ऐसे केस आते हैं कि बस······

अनूप : डाईवोर्स की बात मेरे सामने न कर !

मनोज : क्यों न करूँ ? मुझे तो कोई आधार नहीं मिलता, नहीं तो कस्तूरी को कभी का डाईवोर्स कर दिया होता ।

अनूप : (उठकर तेज स्वर में) तू डाईवोर्स करना चाहता है भाभी जी को ?

मनोज : लेकिन कोई आधार नहीं मिलता ।

कस्तूरी : (सहसा प्रवेश करके) आपको आधार चाहिए ? यह लीजिये ।
[कस्तूरी पत्रों का एक बंडल मनोज की ओर दृढ़ता से बढ़ाती है ।]

अनूप : (लगभग चीखकर) भाभी जी !

मनोज : यह क्या है ?

कस्तूरी : डरिये मत ! यह उन पत्रों का बंडल है जो मुझे शादी से पहले मेरे प्रेमी ने लिखे थे ।

मनोज : (कांपते स्वर में) कस्तूरी···तुम···?

कस्तूरी : हां, मैं भी जानती हूँ कि प्यार किस चिड़िया का नाम है और प्यार की पीड़ा किसे कहते हैं । मैंने भी शादी से पहले प्यार किया था । मैं ब्याहकर इस घर में आई और उस दिन के बाद स्वप्न में भी अगर उस प्रेमी का ध्यान आया हो तो मुझे नरक में भी जगह न मिले । मैंने सच्चे मन से आपको अपना परमेश्वर माना है । लेकिन···लेकिन···(फफेहाँ लगती है) सफाई देने से लाभ ही क्या है ? आप इन पत्रों के आधार पर मुझे डाईवोर्स कर सकते हैं ।

अनूप : ये पत्र मुझे दीजिये ।

कस्तूरी : नहीं, इन पर मेरे पति का अधिकार है अब । लीजिये! (बंडल मनोज के हाथ में देती है ।)

मनोज : तुम···तुम किसे चाहती थी ?

कस्तूरी : पत्र पढ़कर मालूम हो जाएगा । लेकिन अगर आप मेरे मुंह से ही सुनना चाहते हैं तो सुनिये······

अनूप : भाभी जी !

कस्तूरी : मैं···मैं आपके इन्हीं मित्र से प्रेम करती थी ।

[कस्तूरी तेज़ी से अन्दर चली जाती है। मनोज सन्देहपूर्ण दृष्टि से अनूप की ओर देखता है। अनूप सिगरेट सुलगाने लगता है।]

मनोज : हूँ···! तो इसीलिए तुम कस्तूरी की सिफारिश कर रहे थे! (मुंह बनाकर) मीना को भूल जाओ···अपनी पत्नी को सच्चा प्यार दो···

अनूप : मुझे गलत न समझो, मनोज! मैं यह जानता ही नहीं था कि तुम्हारी शादी कस्तूरी से हुई है। तुम्हारे मुंह से पहली बार उसका नाम सुनकर सन्देह हुआ था । रधिया ने बताया कि बहूरानी मेरठ की हैं । तब···

मनोज : सफाई देने की कोशिश न करो, अनूप ! मैं वकील हूँ । मुझे धोखा नहीं दे सकते । तुम दोनों मिलकर मुझे मूर्ख बनाना चाहते थे ।

अनूप : (गरजकर) मनोज ! मुझे चाहे जो कह लो लेकिन अगर भाभीजी पर किसी तरह का लांछन लगाया तो अच्छा न होगा।

मनोज : भाभी जी···हूं ! कस्तूरी क्यों नहीं कहते ? वह तो तुम्हारी प्रेमिका है ?

अनूप : (मनोज के कंधे झकझोरकर) और तेरी पत्नी है ! लेकिन तू···तू इस योग्य नहीं कि उसकी भावनाओं को समझ सके।

मनोज : तू तो समझता है ! ठीक है । मैं कल ही डाईवोर्स के लिए

मूव कर दूंगा और डाईवोर्स के बाद मीना से···

अनूप : क्या मीना तेरे लिए अपने पति को छोड़ देगी ?

मनोज : क्यों नहीं। जहां सच्चा प्यार होता है वहां कोई बन्धन नहीं होता, कोई रुकावट नहीं होती है।

अनूप : वह सच्चे मन से अपने पति को चाहती है। उसे तेरी रत्ती-भर भी याद नहीं।

मनोज : तुझे कैसे मालूम ? यह सब चाल है तेरी। तू चाहता है कि मीना की याद मेरे दिल से निकल जाए और मैं कस्तूरी को प्यार करने लगूं ताकि···

अनूप : मनोज, मैं विश्वास और अधिकार के साथ कहता हूँ। मैं जानता हूँ, मीना अपने पति को प्यार करती है।

मनोज : मगर मुझे कैसे यकीन हो ?

अनूप : (जेब से पत्र निकालकर) इसे पढ़ कर यकीन हो जाएगा।

मनोज : मीना का पत्र है यह ?

अनूप : नहीं। यह पत्र मैंने दो दिन पहले तुम्हें लिखा था। तभी इधर आने का प्रोग्राम बन गया। इसीलिए नहीं डाला। इसे पढ़ कर तुम्हें मेरी बातों की सच्चाई पर विश्वास हो जाएगा। मनोज, नारी के मन की गहरी घाटियों में क्या-क्या रहस्य छिपे हैं, कोई नहीं जानता। अतीत को भुलाकर वर्तमान में जीने की कोशिश करो।(घड़ी की ओर देखकर) मैं जा रहा हूँ, ट्रेन का समय हो रहा है। वापसी में दस-पांच दिन रुक सकता हूँ, यदि तुम चाहोगे तो। बनारस का पता तुम जानते ही हो।

[अनूप तेजी से बाहर चला जाता है। मनोज सोफ़े पर बैठ कर पत्र खोलता है और उसे पूरे ध्यान से पढ़ता है। विस्मय, अविश्वास और पीड़ा के भाव उभरते हैं। उसका हाथ कांपने लगता है।)

मनोज : (टूटे स्वर में)ओह ! कितना अभागा हूँ मैं ! कोई मेरा नहीं।

कस्तूरी भी नहीं, मीना भी नहीं। समाज से हारा, पिता से हारा और आज खुद अपने से हार गया।

(मनोज बांहों में मुंह छिपा लेता है। अन्दर से कस्तूरी आती है। उसके हाथ में एक अटैंची है।)

कस्तूरी : *मैं मेरठ जा रही हूँ। आप डाइवोर्स के लिए मूव कर दें। मैं विरोध नहीं करूंगी।*

[कस्तूरी बाहर वाले द्वार की ओर बढ़ती है।]

मनोज : (सहसा उठकर) ठहरो कस्तूरी ! (कस्तूरी रुक जाती है) मुझे माफ कर दो! (उसके हाथ से अटैंची लेकर फर्श पर रखता हुआ) माफ कर दो मुझे ! मैंने तुम्हें बहुत दुख दिए। कितना पागल था मैं जो घर की शान्ति को ठुकराकर बाहर भटक रहा था ! मुझे तुम्हारी जरूरत है, कस्तूरी !

कस्तूरी : (सिसकती हुई) लेकिन…यह जानकर भी कि मैं शादी से पहले…

मनोज : अतीत में जीना मूर्खता है। हम वर्तमान में जिएंगे। चलो स्टेशन चलें। वहां श्रीमती अनूप से तुम्हारी मुलाकात करा दें।

कस्तूरी : क्या वे भी आई थीं ? यहां क्यों नहीं आई ?

मनोज : अनूप जान-बूझकर नहीं लाया था क्योंकि उसकी श्रीमती का नाम मीना है…मीना।

कस्तूरी : (चौंककर) जी… !

मनोज : जी हां ! जल्दी करो, नहीं तो ट्रेन छूट जाएगी। मेरी अच्छी कस्तूरी ! (ऊंचे स्वर में) रधिया, हम स्टेशन जा रहे हैं। (कस्तूरी को लगभग घसीटता हुआ) चलो…जल्दी चलो!

(यवनिका)

कसौटी

[हास्य-व्यंग्यपूर्ण सामाजिक एकांकी]

हर चमकने वाली वस्तु सोना नहीं होती। और फिर आजकल तो नकल का बोलबाला है; मुलम्मे का युग है यह! फिर असली-नकली की पहचान कैसे हो? सोने को कसकर परखने के लिए कसौटी तो चाहिए ही!

पात्र-परिचय

उर्वशी सौन्दर्य की साकार प्रतिमा; अवस्था २० वर्ष।
उर्मि उर्वशी की सहेली; अवस्था २१ वर्ष।
अनन्त कवि; अवस्था २५ वर्ष।
रंजन चित्रकार; अवस्था २४ वर्ष।
श्रीपत धनी युवक; अवस्था २३ वर्ष।
जीवन साधारण क्लर्क; अवस्था २५ वर्ष।



स्थान उर्वशी का ड्राइंग रूम।



समय सन्ध्या के चार बजे।

[ड्राइंग रूम साफ-सुथरा और सुरुचिपूर्ण ढंग से सजा है। बाएँ कोने में किताबों का रैक और दाएँ कोने में रेडियो-सेट है। कमरे के बीच में सोफा सेट पड़ा है। मेज पर फूलदान है। मेजपोश का रंग नीला है।

कमरे में दो द्वार हैं। सामने वाला द्वार घर के अन्दर जाने के लिए है और बाईं ओर का द्वार बाहर के बरामदे में खुलता है। दोनों पर जालीदार नीले पर्दे पड़े हैं। दाहिनी ओर खिड़की है। खिड़की के नीचे एक नीचा-लम्बा दीवान है जिस पर मोटा गद्दा बिछा है। नीली चादर है और गोल तकियों के गिलाफ भी नीले हैं।

पर्दा उठता है। उर्वशी कोच पर बैठी है। चेहरे पर उदासी की घटा है। उर्मि विचारमग्न होकर टहल रही है। कुछ देर तक मंच पर मौन व्याप्त रहता है।]

उर्मि : (टहलना बन्द करके) हूँ...समस्या सचमुच गम्भीर है! एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं......पूरे चार प्रेमी! और चारों प्रेम का दावा करने वाले!

उर्वशी : हाँ, उर्मि! चारों ही मुझे प्राणों से अधिक चाहते हैं।

उर्मि : और चारों तुझे प्राणों से अधिक चाहते हैं! (फिर टहलती हुई) चार प्रेमी...प्राणों से अधिक चाहने वाले...सुन्दर,

युवा ! सच उर्वशी, मैं तेरी जगह होती तो खुशी से पागल हो जाती। और तू है कि…

उर्वशी : (बीच में ही) उर्मि !

उर्मि : (उर्वशी के पास बैठकर) अरे पगली, आजकल एक प्रेमी पाना भी बड़ा कठिन है ! तू तो बड़ी भाग्यवान है जो चार-चार प्रेमी तेरे लिए जान देने को तैयार हैं। मुझे तेरे भाग्य से ईर्ष्या हो रही है।

उर्वशी : हँसी छोड़ ! कोई रास्ता बता ! मैं बहुत परेशान हूँ। सभी मुझसे शादी करना चाहते हैं।

उर्मि : काश ! हमारा समाज लड़की को चार पति करने की आज्ञा देता ! लेकिन अफसोस, ऐसा नहीं है ! तुझे किसी एक को ही चुनना होगा।

उर्वशी : जानती हूँ ! और इसीलिए तो परेशान हूँ। किसे चुनूँ, किसे त्यागूँ ? मेरी समझ में कुछ नहीं आता।

उर्मि : आण्टी को मालूम है ?

उर्वशी : हाँ।

उर्मि : उन्होंने क्या कहा ?

उर्वशी : मुझ पर ही छोड़ दिया है। कहती है—तेरे सुख में ही मेरा सुख है।

उर्मि : और तेरा सुख किसमें है यह तुझे खुद नहीं मालूम ! है न ?

उर्वशी : हाँ ! इसीलिए तुझे बुलाया है।

उर्मि : मैं क्या कर सकती हूँ ?

उर्वशी : मेरी मदद !

उर्मि : (उठकर) हिस्सा बटाकर ? ना बाबा, यह मेरे बस का काम नहीं है।

उर्वशी : (उठकर विनय के स्वर में) मज़ाक़ छोड़, उर्मि ! मेरे दिमाग पर दिल हावी हो गया है। तू ज़रा सोचकर राय दे

कि मुझे क्या करना चाहिए ?

उर्मि : (सोचने का अभिनय करके) हूँ···! सोच लिया !

उर्वशी : तो बता न कोई तरकीब !

उर्मि : बताऊँ ? (उर्वशी उसके निकट जाकर खड़ी हो जाती है) तू इन चारों को धता बताकर किसी पाँचवें से शादी कर ले।

उर्वशी : (चिढ़कर) तू क्यों तंग कर रही है मुझे ? देख, अगर तू इस तरह तंग करेगी तो मैं···

उर्मि : क्या करेगी तू ?

उर्वशी : (कोच पर बैठकर) रो दूँगी ! (उर्मि हँसती है) तू हँसती है और मेरी जान आफत में फँसी है। (सिसकने लगती है)

उर्मि : अरे तू सचमुच रोने लगी। (उसके पास बैठकर मीठे स्वर में) मेरी राय मानेगी ? बोल ?

उर्वशी : इसीलिए तो तुझे···

उर्मि : बुलाया है ! ठीक है ! मेरी राय यह है कि तू अपने दिल का कहना मान ! तेरा दिल किसे चाहता है ?

उर्वशी : चारों को !

उर्मि : चारों को ? हे भगवान ! तब तो समस्या बहुत उलझी हुई है ! तू चारों को बराबर चाहती है ?

उर्वशी : हाँ ! और मेरे लिए यह फैसला करना बहुत कठिन है कि किसको जीवन-साथी बनाऊँ ?

उर्मि : ऐसे मामलों में बड़ों की राय लेनी चाहिए। आण्टी···

उर्वशी : मम्मी कोई राय नहीं देतीं ! आज चारों ही अन्तिम उत्तर लेने के लिए आने वाले हैं और मम्मी मुझे अकेला छोड़कर अपनी सहेली के घर चली गई हैं।

उर्मि : तो तुझे फैसला आज ही करना है ?

उर्वशी : हाँ !

उर्मि : तब तो एक ही रास्ता है।

उर्वशी : (प्रसन्न होकर) मैं जानती थी कि तू जरूर कोई-न-कोई रास्ता निकाल लेगी। बता, क्या करना चाहिए मुझे ?

उर्मि : कागज के चार टुकड़ों पर अपने प्रेमियों के नाम लिखकर उन्हें मोड़कर रख दे इस मेजपर ! मैं आंखें मूंदकर एक टुकड़ा उठाकर तुझे दे दूंगी। उस टुकड़े पर जिसका नाम हो उसी से शादी कर ले चटपट !

उर्वशी : (झुंझलाकर) तेरा मतलब है कि लॉटरी से अपने प्यार का फैसला करूं ?

उर्मि : और कोई चारा नहीं, उर्वशी !

उर्वशी : इतनी क्रूर न बन, उर्मि ! कोई और उपाय सोच !

उर्मि : क्या उपाय सोचूं ? मैंने न तो तेरे प्रेमियों को देखा है न उन्हें जानती हूँ ! फिर कैसे राय दे सकती हूँ ?

उर्वशी : (उठकर) मैं चित्र दिखाती हूं तुझे ! (रैक से एक अलबम उठाकर लाती है और कोच पर बैठ जाती है) देख, यह चित्र है प्रेमी नम्बर एक का !

उर्मि : इनके बड़े बालों से तो लगता है जैसे यह महाशय कोई पहुँचे हुए कलाकार हों ?

उर्वशी : हां ! यह कवि हैं ! तूने भी इनकी कविताएं पढ़ी होंगी, इनका नाम है अनन्त !

उर्मि : अभी तक तो इनकी कविताएँ पढ़ने का सौभाग्य नहीं मिला।

उर्वशी : बड़ा मधुर कंठ है इनका ! जब झूम-झूमकर अपने प्रेमगीत पढ़ते हैं तो मैं रस के सागर में डूबने-उतराने लगती हूँ। जी चाहता है कि जीवन-भर इनका काव्य-पाठ चलता रहे और मैं आंखें बन्द किए सुनती रहूँ…सुनती रहूँ !

उर्मि : तो रोकता कौन है ?

उर्वशी : (अलबम का पृष्ठ पलटकर) प्रेमी नम्बर दो ! इनका नाम है रजन ! चित्रकार हैं। एक दिन बैठे-बैठे मेरा चित्र बना दिया। कहते हैं—तुम मेरी कला की प्रेरणा हो, मेरी तूलिका की शक्ति हो !

उर्मि : कला की प्रेरणा···हूँ···! जीवन-भर प्रतिमा की तरह इनके सामने बैठी रहो और यह अलग-अलग पोज में तुम्हारे चित्र बनाते रहें। है न ?

उर्वशी : (पृष्ठ पलटकर) और यह हैं प्रेमी नम्बर तीन !

उर्मि : सूट-बूट और टाई में यह कौन महाशय हैं ?

उर्वशी : नाम है श्रीपत ! नगर के सबसे धनी व्यक्ति के एकमात्र पुत्र। कई बार विदेश जा चुके हैं !

उर्मि : इसके लिए कौन-सी प्रेरणा हो ?

उर्वशी : कहते हैं—तुम्हारे समान सुन्दरी संसार के किसी कोने में नहीं देखी ! विदेश की सुन्दरियां तुमसे ईर्ष्या करेंगी ! तुम इस धरती पर स्वर्ग की अप्सरा हो।

उर्मि : हूँ···और प्रेमी नम्बर चार ?

उर्वशी : (पृष्ठ पलटकर) यह रहे।······नाम है जीवन।···बिचारा साधारण स्थिति का व्यक्ति है। लेकिन मुझे सच्चे मन से चाहता है।

उर्मि : मुझे तो प्रेमी नम्बर तीन पसन्द है। बड़े घर की बहू बनेगी, विदेशों की सैर करेगी और···

उर्वशी : लेकिन जीवन का सच्चा सुख इसमें नहीं है, उर्मि !

उर्मि : फिर किसमें है ?

उर्वशी : मैं जानती होती तो तुझे क्यों बुलाती ?

उर्मि : तब क्या किया जाए ? चारों ही तुझे जान से ज्यादा चाहते हैं ! तेरे बिना कोई जिन्दा नहीं रह सकता ! है न ?

उर्वशी : कहते तो यही हैं !

उर्मि : कहने और करने में अन्तर होता है। कोरी भावुकता में कुछ नहीं रखा है। मेरी मान और आंख मूंदकर प्रेमी नम्बर तीन से शादी कर ले।

उर्वशी : नहीं ! तब तो शेष तीनों यही कहेंगे कि मैंने पैसों पर अपना प्यार बेच दिया। उर्मि, मैं अपने को नीलाम करना नहीं चाहती।

उर्मि : तो फिर चारों की परीक्षा ले ले ! जो खरा उतरे उसी को जीवन-साथी बना ले।

उर्वशी : परीक्षा ?

उर्मि : हाँ ! कसौटी पर कसे जाने के बाद ही खरे-खोटे सोने की परख होती है, पगली !

उर्वशी : नहीं, उर्मि ! उनकी परीक्षा लेना मेरे बस की बात नहीं।

उर्मि : शायद इसलिए कि उनकी परीक्षा लेने से पहले तुम्हें स्वयं अपनी परीक्षा लेनी होगी।

उर्वशी : शायद इसीलिए !

उर्मि : तो मैं परीक्षा लूंगी।

उर्वशी : तुम ?

उर्मि : हाँ ! आण्टी तो बीच में नहीं आ टपकेंगी ?

उर्वशी : वे सात से पहले नहीं आएंगी ! लेकिन···कैसे लोगी परीक्षा तुम ? तुम्हारी कसौटी क्या होगी ? कैसे परखोगी तुम ?

उर्मि : यह मुझ पर छोड़ दो।

उर्वशी : मुझे क्या करना होगा ?

उर्मि : कुछ नहीं। अन्दर के कमरे में बैठकर चुपचाप हमारी बात सुनती रहना और तब तक बाहर न आना जब तक मैं न पुकारूं ! बोलो, मंजूर है ?

उर्वशी : हाँ !

उर्मि : कब आएंगे वे लोग ?

उर्वशी : किसी भी क्षण आ सकते हैं (उठकर अलबम रैक में रखती है) तुम्हारी परीक्षा बहुत कड़ी तो नहीं होगी ?

उर्मि : क्यों, डर गई ? हो सकता है कि परीक्षा में सभी फेल हो जाएं। वादा करो कि उस दशा मे तुम्हें दुःख नही होगा और फिर माण्टी की पसन्द के किसी युवक से शादी कर लोगी।

उर्वशी : (मुड़कर) वादा करती हूँ।

[नेपथ्य से 'उर्वशी'—'उर्वशी' का स्वर आता है]

उर्मि : (उठकर) जल्दी से अन्दर चली जाओ।

[उर्वशी तेज़ी से अन्दर जाती है। उर्मि उदास मुद्रा में कोच पर बैठ जाती है। बाहर से अनन्त का प्रवेश। पाजामा, कुर्त्ता और सदरी पहने है। बाल बड़े हैं। वह उर्मि को देखकर चौंकता है।]

अनन्त : क्षमा कीजिएगा, क्या मैं भ्रमवश किसी अन्य सदन में आ गया हूँ ?

उर्मि : (उठकर) नही; आप ठीक जगह ही आए हैं। बैठिये !

अनन्त : (उठकर) धन्यवाद ! आप भी विराजिये ! (उर्मि भी बैठ जाती है) देवि उर्वशी कहाँ हैं ?

उर्मि : क्या काम है उनसे ?

अनन्त : जीवन के प्रश्न का उत्तर लेना है। हां, मैं भी कैसा मूर्ख हूँ ? अपना परिचय तो दिया ही नहीं ! मेरा शुभनाम अनन्त है और मैं कवि हूँ !

उर्मि : यह तो आपका हुलिया ही बता रहा है ! क्या उर्वशी को कोई गीत सुनाना है ?

अनन्त : देवि उर्वशी तो मेरे हृदय की वीणा के प्रत्येक तार की प्रत्येक झंकार से परिचित हैं। वे मेरे काव्य की चेतना हैं—प्रेरणा हैं ! मेरे सब गीत उन्हीं के श्रीचरणों में अर्पित हैं।

उर्मि : क्या मैं आपका कोई गीत सुन सकती हूँ ?

अनन्त : नहीं ! मेरे गीत सुनने का एकमात्र अधिकार देवि उर्वशी को है। कल, अर्द्धरात्रि के नीरव क्षणों में एक परम कोमल गीत की रचना की है मैंने।

उर्मि : उसी को सुनाने आए हैं ?

अनन्त : हाँ ! और जीवन के प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के हेतु भी !

उर्मि : मैं समझी नहीं आपका मतलब !

अनन्त : मैं देवि उर्वशी के श्रीचरणों में बैठकर जीवन के शेष दिन काव्य-साधना में काटना चाहता हूँ। यूँ निवेदन तो मैं कई अवसरों पर कर चुका हूँ, आज अन्तिम निर्णय की प्रतीक्षा है—आकुल प्रतीक्षा।

उर्मि : ओह ! तब आपकी व्याकुलता मैं और अधिक बढ़ाना नहीं चाहती। उर्वशी घर में नहीं है। वह आण्टी के साथ हॉस्पिटल गई है।

अनन्त : क्यों ? पूज्य माता जी अस्वस्थ हैं क्या ?

उर्मि : आण्टी तो ठीक हैं लेकिन उर्वशी…

अनन्त : देवि उर्वशी का स्वास्थ्य कुछ शिथिल है ? (उठकर) किस औषधालय में गई हैं ? शीघ्र बताओ। और यह भी बताने का कष्ट करो कि उन्हें क्या कष्ट है ?

उर्मि : कष्ट कोई खास तो नहीं है। जरा-सा जल गई हैं।

अनन्त : कैसे ?

उर्मि : स्टोव से ! हाथ-पैर तो सही-सलामत हैं लेकिन चेहरा…

अनन्त : (बैठकर) हैं ! देवि उर्वशी का चन्द्रमुख विकृत हो गया ? सौंदर्य की साकार प्रतिमा खंडित हो गई ? हाय, अब मेरी काव्य-साधना कैसे पूरी होगी ?

उर्मि : आण्टी उसे सिविल लाइन्स के सरकारी हॉस्पिटल में ले गई हैं। आप जल्दी जाइए। हाय, बिचारी आपके नाम …

लगाए थी।

अनन्त : (उठकर) मेरे नाम की रट लगाए थी? तुम सचमुच देवि हो, उर्वशी! किन्तु मैं पृथ्वी का लघुमानव तुम्हारे योग्य नहीं। मुझे क्षमा करना, देवि! (उर्मि से) सुन्दरी, आपने मेरा गीत सुनने की इच्छा व्यक्त की थी। (बैठकर) आप की इच्छा मेरे लिए आदेश है। सुनिए!

उर्मि : *(उठकर) क्षमा कीजिए! मुझे इस समय अवकाश नहीं है। फिर कभी सुनूंगी।*

अनन्त : (उठकर) जो आज्ञा! हां, कहां दर्शन होंगे आपके? हे प्रभो, तू बड़ा कृपालु है। मेरी काव्य-चेतना नष्ट होने से बच गई। एक प्रेरणा छीनकर तत्काल दूसरी दे दी। (उर्मि से) क्या नाम है आपका सुन्दरी?

उर्मि : नाम फिर बता दूंगी। इस समय···आप शीघ्र जाकर उर्वशी को देखिए।

अनन्त : नहीं देवि, मेरी पार्थिव आंखों में अब इतनी शक्ति नहीं कि उसके अलौकिक रूप को देख सकें। मेरे लिए तो अब आप ही···
[बाहर से रंजन का प्रवेश। धोती-कुर्ता पहने है।]

रंजन : नमस्कार अनन्त जी!

अनन्त : (चिढ़कर) नमस्कार! (उर्मि से) अच्छा, फिर दर्शन करूंगा, देवि! अब आज्ञा दीजिए।
[अनन्त का प्रस्थान]

रंजन : उर्वशी जी कहां हैं?

उर्मि : आपका परिचय?

रंजन : मैं रंजन हूं। चित्र बनाता हूं।

उर्मि : किसके?

रंजन : केवल उर्वशी के।

उर्मि : अच्छा!

रंजन : जी हाँ ! मेरी तूलिका ने उसी के सौन्दर्य में अपनी कला की पूर्णता पाई है । अब तो यही इच्छा है कि हरसिंगार के पेड़ के नीचे आरामकुर्सी पर उर्वशी बैठी रहे और मैं जीवन-भर उसके चित्र बनाता रहूँ ।

उर्मि : बड़ी अच्छी इच्छा है। रंजन जी, क्या मेरा भी चित्र बनाने की कृपा करेंगे ? उर्वशी आपकी तूलिका की बड़ी प्रशंसा कर रही थी ।

रंजन : यदि आपका चित्र बनाने बैठूंगा भी, तो वह चित्र आपका न होकर उर्वशी का होगा, क्योंकि सृष्टि के हर पदार्थ में मुझे वही दिखाई देती है ।

उर्मि : धन्य हैं आप ! देखिए, उर्वशी को आण्टी हॉस्पिटल ले गई हैं । स्टोव से जल गई थी बिचारी ! चेहरा एकदम···

रंजन : चेहरा जल गया ? (हताश होकर बैठता हुआ) उर्वशी का चेहरा जल गया ! अब मेरी तूलिका किसका चित्र बनाएगी ?

उर्मि : जाते-जाते आपका नाम ले रही थी । जल्दी से हॉस्पिटल जाइए । आपको देखकर उसे बल मिलेगा ।

रंजन : मेरा बल तो वही थी, मैं उसे क्या बल दूंगा ? जिन आँखों ने उसका अलौकिक रूप देखा था, वे अब विकृत सौन्दर्य कैसे देख पाएँगी ? नहीं···मुझमें इतना साहस नहीं है । मैं आज अपनी तूलिका तोड़कर फेंक दूंगा । (उठता है)

उर्मि : मुझे आपके साथ सहानुभूति है, रंजन जी !

रंजन : हाँ···मैं दया का पात्र हूँ। मेरे सपने तो राख में मिल गए । (सहसा उर्मि की ओर ध्यान से देखकर) नहीं, अभी आशा की किरण है! ···आपने अपना चित्र बनाने के लिए कहा था ?

उर्मि : हाँ···किन्तु आपने अस्वीकार कर दिया था ।

रंजन : वह मेरी भूल थी । मैं अब आपका चित्र बनाऊँगा·· अवश्य बनाऊँगा और वह चित्र संसार का सबसे सुन्दर चित्र होगा ।

उर्मि : उर्वशी के चित्र से भी सुन्दर ?

रंजन : हाँ,; उसका चित्र निष्प्राण था। आपके चित्र में मैं प्राण-प्रतिष्ठा करूँगा। बोलिए, कब सेवा में प्रस्तुत होने का आदेश देती हैं आप?

[बाहर से कार के हार्न की ध्वनि आती है।]

उर्मि : लगता है, कोई आया है।

रंजन : श्रीपत होगा! ठीक है, मैं फिर आऊंगा।

[रंजन बाहर वाले द्वार की ओर बढ़ता है। बाहर से श्रीपत का प्रवेश। वह कीमती सूट पहने है। श्रीपत रंजन को घूरकर देखता है। रंजन चुपचाप बाहर चला जाता है।]

श्रीपत : लफ़ंगे! न कपड़े पहनने का ढंग और न बात करने का सलीका।

उर्मि : जी? मुझसे कह रहे हैं कुछ?

श्रीपत : (उर्मि को देखकर) ओह, एक्सक्यूज मी! मैंने आपको नहीं देखा था। आई एम सॉरी ···वेरी सॉरी!

उर्मि : बैठिए!

श्रीपत : (बैठकर जेब से सिगरेट निकालकर) मे आइ स्मोक?

उर्मि : शौक से!

श्रीपत : थैंक्स! (सिगरेट जलाकर) सिगरेट पीने की आदत विदेश में पड़ गई। हाँ, आपको कभी पहले नहीं देखा।

उर्मि : मैं उर्वशी की सहेली हूँ। और आप?

श्रीपत : मुझे श्रीपत कहते हैं। इसी उम्मीद पर जिन्दा हूँ कि उर्वशी कभी मेरा प्रपोजल स्वीकार करके मुझे अपना लेगी।

उर्मि : मैं सफलता की कामना करती हूँ।

श्रीपत : थैंक्स! आप अपनी सहेली को समझाइएगा! न जाने क्या देखा है अनन्त, रंजन और जीवन में कि वह उनके पीछे दीवानी है!

उर्मि : अच्छा!

श्रीपत : जी हाँ! अब आप ही सोचिए, कभी कविता और चित्रकारी

से पेट भरा है किसी का ? और वह जीवन···! एक मामूली क्लर्क ! वह सुखी रख पाएगा उर्वशी को ?

उर्मि : कभी नहीं !

श्रीपत : मगर उसकी समझ में आए तब न ? आज मैं आखिरी जवाब लेने आया हूँ उर्वशी से। कहाँ है ?

उर्मि : आन्टी के साथ हॉस्पिटल गई है।

श्रीपत : हॉस्पिटल ! क्यों ?

उर्मि : स्टोव से जल गई थी।

श्रीपत : (घबराकर) माई गॉड ! ज्यादा तो नहीं जली ? आई मीन···

उर्मि : हाथ-पैर तो बच गए लेकिन चेहरा ज़रा···

श्रीपत : फ़ेस खराब हो गया ! ओह, हाऊ सैड·! सच ए प्रेटी फ़ेस डिसफ़िगर्ड ! (उठकर टहलता हुआ) पिटी···ग्रेट पिटी ! (सहसा सीने पर हाथ रखकर) उफ़ ! माई हार्ट···!

उर्मि : क्या हुआ आपके हार्ट को ?

श्रीपत : शॉक लगा है मेरे दिल को। (थका-सा बैठकर) मेरा दिल बहुत कमज़ोर है। आई मस्ट सी दि डॉक्टर एटवन्स।

उर्मि : और···उर्वशी को देखने नहीं जाएँगे ? वह बिचारी तो आपकी दीवानी है।

श्रीपत : पास्ट इज पास्ट ! अब उससे शादी कैसे कर सकता हूँ ?

उर्मि : तो आप उर्वशी को नहीं उसके सौंदर्य को चाहते थे ?

श्रीपत : ओह, प्लीज़ डोण्ट बी सो हार्श ! प्यार तो मैं उसे ज़िन्दगी-भर करता रहूँगा लेकिन शादी···(दोनों हाथ मलता हुआ) नामुमकिन है ! शादी दो दिलों का मेल नहीं, सामाजिक प्रश्न है। मुझे हर साल विदेश जाना पड़ता है। यहाँ भी क्लबों और डिनर पार्टियों में शामिल होना पड़ता है···

उर्मि : और जहाँ आप कुरूप चेहरे वाली पत्नी को लेकर नहीं जा सकते ?

श्रीपत : यस…यस…! प्लीज़ अण्डरस्टैण्ड माई व्यू पोआँइण्ट! मैं समझता था, उर्वशी से शादी करके मुझे समाज में सम्मान मिलेगा, विदेशों में लोकप्रियता मिलेगी। (पीड़ित स्वर में) ओह… आल माई होप्स शैटर्ड ! डैम दैट स्टोव (उठकर) कितना अभागा हूँ मैं ! अब मुझे उर्वशी जैसी पत्नी कहाँ मिलेगी ?

उर्मि : क्यों नहीं मिलेगी ? खोजने भर की देर है !

श्रीपत : (उर्मि की ओर घूरकर) यू मीन…! (सहसा करीब जाकर) ओह माई गॉड ! आई नेवर सा यू ! आप भी तो ब्यूटीफुल हैं ! बोलिए, विल यू मैरी मी ?

उर्मि : यह क्या कह रहे हैं आप ?

श्रीपत : मेरे सवाल का जवाब दीजिए ! आप उर्वशी जैसी सुन्दर तो नहीं लेकिन फिर भी आपकी फ़िगर चार्मिंग है ।

उर्मि : आई एम सॉरी, मिस्टर श्रीपत ! मैं किसी और से प्यार करती हूँ ।

श्रीपत : तो क्या हुआ ? मैं भी तो किसी और से प्यार करता हूँ।

उर्मि : आपको इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी कि मैं शादी आपसे करूँ और प्यार किसी और से करूँ ?

श्रीपत : आई डोण्ट माइंड सच पैटी थिंग्स ।

उर्मि : (उठकर) और अगर शादी के बाद मैं भी स्टोव से जल जाऊँ तो ? (श्रीपत मौन रहता है) बोलिए उत्तर दीजिए ! अगर मेरा चेहरा भी कुरूप हो जाये तो क्या करेंगे आप ? मुझे छोड़कर किसी अन्य सुन्दरी से ब्याह रचाएँगे ? (स्वर कड़ा हो जाता है) क्यों, ठीक कह रही हूँ न ?

श्रीपत : (परेशान स्वर में) ओह… यू डोण्ट एप्रीशिएट माई फ़ीलिंग्स ।

उर्मि : फ़ीलिंग्स माई फ़ुट । यू मे गो नाउ ।

उर्वशी : यस… यस… आई मस्ट गो… ! (सीने पर हाथ रखकर बाहर जाता हुआ) माई हार्ट… माई हार्ट…

[श्रीपत का प्रस्थान। उर्वशी सामने वाले पर्दे से झांकती है। कार की आवाज दूर जाती है।]

उर्वशी : और तू कह रही थी कि मैं इसी से शादी कर लूं।

उर्मि : (घूमकर) आई एम सॉरी डियर! देख लिया अपने प्रेमियों को? हूं...! सब प्राणों से ज्यादा चाहते हैं। चीट...! देखूं प्रेमी नम्बर चार क्या करते हैं!

[साइकल की घंटी की आवाज नेपथ्य से आती है।]

उर्वशी : जीवन आ गया! सावधान!

[उर्वशी पीछे हट जाती है। उर्मि उदास होकर कोच पर बैठ जाती है। बाहर का पर्दा हटाकर जीवन झांकता है।]

जीवन : मैं अन्दर आ सकता हूं?

उर्मि : (उठकर) आइए! आइए!

[जीवन अन्दर आता है। पेंट-कमीज पहने है।]

जीवन : उर्वशी जी कहां हैं?

उर्मि : क्या काम है उससे?

जीवन : जी...जी... जरूरी काम है।

उर्मि : मैं नहीं सुन सकती? (हंसकर) बैठिये न! आप तो संकोच करते हैं।

जीवन : (खड़ा रहता है) जी...ठीक है। उर्वशी जी से ही काम है। (द्वार की ओर मुड़ता हुआ) फिर कभी आ जाऊंगा।

उर्मि : अपना परिचय तो देते जाइए।

जीवन : (रुककर) मेरा नाम जीवन है।

उर्मि : जीवन...अच्छा नाम है।

जीवन : जी हां, और सार्थक भी।

उर्मि : क्या मतलब है आपका?

जीवन : जीवन के सारे संघर्ष, उसकी सारी जटिलताएं मुझे प्राप्त हुई

उर्मि : हूं...! याद आया। उर्वशी आपका जिक्र कर रही थी शायद उसे प्यार करते हैं?

जीवन : उसे कौन प्यार नहीं करेगा ?

उर्मि : उससे शादी भी करना चाहते हैं ?

जीवन : यदि वह मुझे स्वीकार कर लेगी तो मैं अपने भाग्य को सराहूँगा।

उर्मि : आप उसे सुखी रख सकेंगे ?

जीवन : चेष्टा करूँगा। वैसे, मैंने अपने बारे में तो सब कुछ बता दिया है उसे। वह यह जानती है कि मुझसे शादी करने का अर्थ है कठिनाइयों, संघर्षों और मजबूरियों का वरण करना।

उर्मि . वह कह रही थी कि उसे तीन लोग और चाहते हैं। उनमें से एक तो बहुत धनी है। क्या उसे छोड़कर उर्वशी आपसे शादी करेगी ?

जीवन : यह प्रश्न आप उसी से पूछें।

उर्मि : आपका क्या खयाल है ?

जीवन : क्षमा करें, इस प्रश्न का उत्तर मैं नहीं दे सकता।

उर्मि : आपके पास क्या है उसे देने के लिए ?

जीवन : सच्चा प्यार।

उर्मि : और लोग क्या उसे सच्चे मन से प्यार नहीं करते ?

जीवन : मैं नहीं जानता। (खीजकर) किन्तु आप यह प्रश्न क्यों कर रही हैं ? कौन हैं आप ?

उर्मि : उर्वशी की सहेली हूँ।

जीवन : उर्वशी कहाँ है ?

उर्मि : हॉस्पिटल में।

जीवन : (चौंककर) हॉस्पिटल में ? क्यों ? कुशल तो है ?

उर्मि : चिन्ता की बात नहीं। स्टोव से जल गई थी।

जीवन : (उद्विग्नता से) कब ?

उर्मि : करीब आधा घण्टा पहले। बिचारी का चेहरा जलकर एकदम झुलस गया।

जीवन : आपने पहले क्यों नहीं बताया ? (तीखे स्वर में) उर्वशी अस्पताल में है और आप तरह-तरह के बेहूदा सवाल करके मेरा

समय नष्ट करती रही। आप सहेली बनती हैं उसकी। शर्म आनी चाहिए आपको --! किस हास्पिटल में गई है वह ?

उर्मि : आप वहाँ जाकर क्या करेंगे ?

जीवन : (चीखकर) मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिए।

उर्मि : उसका कुरूप चेहरा पहचान सकेंगे आप ?

जीवन : उसके चेहरे की सुन्दरता नष्ट हो सकती है, लेकिन मन की सुन्दरता कौन छीन सकता है ? (द्वार की ओर बढ़कर) आप नहीं बताना चाहती तो रहने दें। मैं शहर के हर अस्पताल की खाक छानकर उसे खोज लूँगा।

उर्मि : सुनिए तो ! (जीवन रुक जाता है) ऐसी जल्दी क्या है ? कुछ देर मेरे पास बैठ लीजिए ! क्या मैं सुन्दर नहीं हूँ ?

जीवन : आप उर्वशी की सहेली हैं, इसलिए मैं कुछ नहीं कहना चाहता ! मगर इतना समझ लीजिए, उसका जला-भुना कुरूप चेहरा भी आपके इस गोरे-चिट्टे चेहरे से लाख गुना सुन्दर होगा !

[जीवन बाहर जाने के लिए मुड़ता है।]

उर्वशी : (सहसा प्रवेश करके) जीवन···!

[जीवन बिजली की तेजी से पलटता है। उर्वशी को देखकर अवाक् रह जाता है ; कभी उर्मि की ओर देखता है और कभी उर्वशी की ओर।]

जीवन : आप तो कह रही थी ··

उर्मि : वह तो कसौटी थी—खरे-खोटे की परख करने के लिए ! (उर्वशी की ओर मुड़कर) मेरा काम खत्म हुआ ! अब तू जाने और तेरा काम जाने !

[उर्मि तेजी से बाहर चली जाती है।]

जीवन : उर्वशी !

उर्वशी : जीवन !

[दोनों बाहें फैलाकर एक-दूसरे की ओर बढ़ते हैं। तभी पर्दा गिरता है।]

गूँगी दीवारें : बहरे दरवाजे

[विचार-प्रधान एकांकी]

छात्रों में अनुशासनहीनता का आरोप नया नहीं है। आखिर छात्रों की उद्दण्डता का कारण क्या है? इसके लिए उत्तरदायी कौन है? स्वयं छात्र, शिक्षक अथवा अभिभावक? घर, स्कूल अथवा सामाजिक पर्यावरण?

पात्र-परिचय

वाइसचांसलर
प्राक्टर
पुलिस-अधिकारी
छात्र-संघ का अध्यक्ष
छात्रा
अभिभावक

⊙

स्थान — किसी भी ऐसे नगर में, जहाँ विश्वविद्यालय है, वाइसचांसलर की बैठक

⊙

समय — सितम्बर के अन्तिम सप्ताह का एक दिन

[बैठक की सजावट आधुनिक और सुरुचिपूर्ण है। बहुमूल्य फ़र्नीचर हैं। कमरे में तीन द्वार हैं। सामने वाला द्वार अध्ययन-कक्ष में खुलता है; बाईं ओर का द्वार अन्दर जाने के लिए है; दाईं ओर का द्वार बाहरी बरामदे में खुलता है। इस द्वार के पास ही एक खिड़की है जिसके पास खड़ा हुआ व्यक्ति बँगले के गेट को देख सकता है।

पर्दा उठता है। कक्ष में केवल तीन व्यक्ति हैं। वाइसचान्सलर महोदय दर्शकों की ओर मुँह किये सोफ़े पर बैठे हैं, प्राक्टर साहब बेचैनी से चहलकदमी कर रहे हैं और पुलिस-अधिकारी जी अपना पाइप सुलगा रहे हैं। तीनों के चेहरों पर चिन्ता की रेखाएँ हैं।]

वाइसचान्सलर : ग्यारह बज गए। वे लोग अभी तक नहीं आए।

प्राक्टर : हम कब तक उनकी राह देखेंगे? अब हमें फ़ौरन कोई फ़ैसला करना चाहिए।

अधिकारी : जल्दबाज़ी करना ठीक नहीं। वी मस्ट वेट फ़ॉर देम।

प्राक्टर : लेकिन वे हमारी बात मानेंगे नहीं।

वाइसचान्सलर : और हम उनकी माँगें पूरी नहीं कर सकते।

अधिकारी : फिर भी जब हमने यूनियन के प्रेज़ीडेण्ट और सेक्रेटरी को बुलाया है तो एक बार समझौते की कोशिश तो करनी ही चाहिए।

प्रावटर : समझौता बराबर की पार्टियों में होता है। यह तो वक्त की बात है साहब कि हम उन आवारा छोकरों से बात करने के लिए मजबूर हुए हैं।

अधिकारी : यह मजबूरी इसी लिए है न कि यूनियन पावरफ़ुल है; उसका यहाँ के स्टूडेण्ट्स पर होल्ड है!

वाइसचान्सलर : अगर मेरा बस चले तो यूनियन बनाने का सिस्टम ही खत्म कर दूँ! यूनियन ही खुराफात की जड़ है।

प्रावटर : यू आर राइट, सर! यूनियन की क्या जरूरत है? हुँः···विद्यार्थी नहीं गोया मजदूर हो गए जो ट्रेड यूनियन बनाकर अपनी माँगें रखते हैं, हड़ताल की धमकी देते हैं, जुलूस निकालते हैं। नान्सेन्स!

[फोन की घण्टी बजती है। अधिकारी महोदय आगे बढ़ फ़ोन उठाते हैं। वाइसचान्सलर और प्रावटर उत्सुकता से उस ओर देखते हैं।]

अधिकारी : हलो······! मैं वाइसचान्सलर के यहाँ से बोल रहा हूँ! कौन···क्यों···खैर तो है···? हाँ···हाँ···! क्या···! भीड़ बढ़ती जा रही है! ठीक है···। अभी शान्त रहो। और देखो, अगर यूनियन के प्रेज़ीडेण्ट और सेक्रेटरी वहाँ हों, तो फ़ौरन वी॰ सी॰ साहब के बँगले पर भेज दो। हम उनका इन्तज़ार कर रहे हैं; ऐं ··हाँ···हाँ, फ़ौरन भेजो।

[चोंगा रखकर सोफ़े की ओर बढ़ते हैं।]

वाइसचान्सलर : स्थिति गम्भीर तो नहीं है?

अधिकारी : (बैठकर) सीरियस तो है ही। लड़कों की भीड़ बढ़ती जा रही है। जुलूस की तैयारी हो रही है।

प्रावटर : प्रोसेशन इधर भी आ सकता है क्या?

अधिकारी : आना तो नहीं चाहिए। वे लोग अन्य कॉलेजों में

जाकर स्ट्राइक कराने की कोशिश करेंगे।

वाइसचान्सलर : लेकिन अगर यहां आया, तो ? प्रोसेशन कभी-कभी वायलेण्ट भी हो जाता है।

अधिकारी : डर की कोई बात नहीं। कोठी के बाहर सुरक्षा का पूरा प्रबन्ध है। डोण्ट वरी, सर !

वाइसचान्सलर : मैं यूनिवर्सिटी जाकर लड़कों को समझाऊँ ?

प्राक्टर : आपका वहाँ जाना खतरे से खाली नहीं है, सर ! मॉब-साइकॉलॉजी का क्या भरोसा ?

अधिकारी : मेरी भी यही राय है। लीव देम टु देमसेल्व्ज। थोड़ी देर बाद अपने-आप डिस्पर्स हो जाएंगे। लेकिन अगर हमने छेड़ा तो हो सकता है कि शहद की मक्खियों की तरह काटने लगें।

प्राक्टर : यह भी वक्त की बात है, साहब ! वरना इसी हिंदोस्तान में कितना आदर होता था गुरुजनों का ! अब तो गुरु-शिष्य की वह परम्परा ही लुप्त हो गई है। [एक कुर्सी पर बैठ जाते हैं।]

अधिकारी : मेरी समझ में नहीं आता, आखिर हमारा यूथ जा किधर रहा है ! लगता है, विद्यार्थी स्कूल-कॉलेज में पढ़ने नहीं, लोफरी करने आते हैं। राह चलती लड़कियों को छेड़ना, दूकानदारों से झगड़ना, टीचरों के छुरे मारना, बाज़ारों में हुल्लड़बाजी करना, सिनेमाघरों में शोर मचाना ! यह सब क्या है, क्यों है ?

वाइसचान्सलर : लैक ऑफ मिशन इन लाइफ !

प्राक्टर : यू आर करेक्ट, सर ! लोग कहते हैं कि हमारी शिक्षापद्धति सिर्फ क्लर्क बनाती है। मगर साहब, आजकल ज्यादातर लड़के या तो अभिनेता बनने के चक्कर में रहते हैं या फिर नेता। क्लास की पढ़ाई

में तो किसी का मन लगता ही नहीं।

अधिकारी : (हँसकर) रोमियो और जूलियट के किस्से भी तो दोहराए जाते हैं!

प्रावटर : आग-फूस एक साथ रहेंगी तो क्या होगा? आप मुझे पुराने खयालों का आदमी कह सकते हैं साहब, लेकिन सच बात तो यह है कि मुझे को-एजूकेशन का सिस्टम बिल्कुल पसन्द नहीं।

अधिकारी : आई एग्री विद यू। लैला और मजनूं का रोमान्स मकतब, आई मीन स्कूल में ही हुआ था।

वाइसचान्सलर : सारा दोष तो सस्ती रोमाण्टिक फिल्मों का है। माई गॉड, ऐसे बेहूदे दृश्य, ऐसे गन्दे संवाद, ऐसे अश्लील गाने और नाच कि कोई शरीफ आदमी उन्हें परिवार के साथ देख ही नहीं सकता।

प्रावटर : और हमारे छात्र ऐसी ही फिल्मों के लिए क्लास गोल कर देते हैं। बाप गाढ़ी कमाई से रुपए भेजते हैं फ़ीस और किताबों के लिए, मगर साहबज़ादे बहाते हैं सिनेमा में।

वाइसचान्सलर : ज़रा-ज़रा-से बच्चे इश्क और मुहब्बत के ऐसे फ़ोश गीत गाते हैं कि सुनकर गर्दन शर्म से झुक जाती है।

प्रावटर : फ़ैशनपरस्ती भी फिल्में ही सिखाती हैं। कैसी बेहूदा और चुस्त पोशाकें चली हैं आजकल! भला बताइए, अंगों की यह नुमाइश क्या भारतीय परम्परा के अनुकूल है?

अधिकारी : मैं मानता हूँ, लड़कों और लड़कियों को बिगाड़ने में फिल्मों का काफ़ी हाथ है। लेकिन क्या और फैक्टर्स इसके लिए जिम्मेदार नहीं हैं?

प्रावटर : हैं क्यों नहीं? आज की शहरी सभ्यता ही ऐसी है कि

गाँव के सीधे-साधे लड़कों को भी अपने रंग में रँग लेती है। मेरी राय तो यह है कि स्कूल कॉलिजों को शहर के बाहर ही रखना चाहिए। लड़कों को शहर आने की आज्ञा ही न हो।

अधिकारी : क्या ऐसा मुमकिन है ?

मास्टर : क्यों नहीं ? पुराने जमाने में आश्रम जंगलों में होते थे। विद्यार्थी वहीं रहकर पढ़ते थे और शिक्षा पूरी करके ही वापस आते थे। तब गुरु-शिष्य का नाता ऐसा था कि गुरु के इशारे पर शिष्य जान दे सकते थे, मगर आजकल तो यह नौबत है कि अगर किसी टीचर ने क्लास में किसी लड़के को डाँट-भर दिया तो समझिए उसकी ख़ैर नहीं।

वाइसचान्सलर : इन्वेजीलेटर्स के छुरा भोंकने के समाचार आप हर साल अख़बार में पढ़ते ही होंगे।

अधिकारी : समझ में नहीं आता यह क्या पागलपन है ! क़ानून का भी डर नहीं रहा इन छोकरों को।

मास्टर : और अगर किसी लड़के के ख़िलाफ़ एक्शन लिया जाता है तो हड़तालें करते हैं, प्रोसेशन निकालते हैं।

वाइसचान्सलर : और साहब, कुछ पोलिटिकल पार्टीज़ उन्हें शह देती हैं। हर पार्टी स्टूडेण्ट फ्रण्ट पर अपना प्रभाव रखना चाहती है क्योंकि वहीं से तो उसे पढ़े-लिखे यंग वर्कर्स मिलते हैं।

मास्टर : इसीलिए तो यूनियन के चुनावों में भी पार्टीज़ काफी दिलचस्पी लेती हैं। यूनियन का चुनाव गोया असेम्बली का चुनाव हो गया।

[बाहर से छात्र-संघ के अध्यक्ष और मन्त्री का प्रवेश]

अधिकारी : (उठकर) आइए, आइए ! हम लोग आपका ही

इन्तजार कर रहे थे।

अध्यक्ष : यह तो हम बँगले के बाहर खड़ी पुलिस को देखकर ही समझ गए थे। (वाइसचान्सलर से) आपने पुलिस को बुलाकर अच्छा नहीं किया, सर!

वाइसचान्सलर : पुलिस का काम शान्ति और व्यवस्था कायम रखना ही है। इसलिए अगर...

मन्त्री : (बीच में ही) शान्ति और व्यवस्था भंग करने का हमारा कोई इरादा नहीं है। हम शान्तिपूर्ण प्रदर्शन करेंगे।

अधिकारी : आप बैठिए तो, मिस्टर! खड़े-खड़े इत्मीनान से बातें नहीं हो सकती।

[दोनों खड़े रहते हैं।]

प्रॉक्टर : (व्यंग्य से) क्यों, हम लोगों के सामने बैठने में संकोच हो रहा है? अरे जनाब, आदर और इज्जत देने के और भी तरीके हैं!

अध्यक्ष : आप हमें गलत समझ रहे हैं।

वाइसचान्सलर : प्लीज़ सिट डाउन।

अध्यक्ष : थैंक यू, सर!

[अध्यक्ष, मन्त्री और अधिकारी बैठते हैं।]

मन्त्री : यूनिवर्सिटी कम्पाउण्ड में भी लाठीबन्द पुलिस तैनात है। पुलिस को देखकर अगर लड़के उत्तेजित हो जाएँ और कोई अप्रिय घटना घटित हो जाए तो उसकी जिम्मेदारी आप लोगों पर ही होगी।

अधिकारी : (पाइप सुलगाकर) उन लोगों को आदेश दे दिया गया है कि जब तक स्टूडेंट्स की तरफ से पहल न हो, वे खामोश रहें।

अध्यक्ष : (उत्तेजित होकर) आप चाहते हैं कि हम पहल करें और फिर आप निहत्थे लड़के-लड़कियों पर लाठियाँ बरसाएँ ?

अधिकारी : (शान्त स्वर में) जोश में आने की जरूरत नहीं है, मिस्टर ! हम तो यह चाहते हैं कि शान्तिपूर्ण ढङ्ग से समझौता हो जाए। इसीलिए आप लोगों को बुलाया गया है।

मन्त्री : हम भी इसीलिए आए हैं, श्रीमान् जी !

अध्यक्ष : और अपने साथियों से कहते आए हैं कि जब तक हम लौटकर न आएँ, वे विद्यार्थियों को शान्त रखें।

प्राक्टर : इस कृपा के लिए हम आभारी हैं।

मन्त्री : आपकी यह व्यंग्य-शैली घातक सिद्ध हो सकती है।

वाइसचान्सलर : बेकार बातों में समय नष्ट करने से कोई फ़ायदा नहीं। मतलब की···

प्राक्टर : (बीच में ही) आइ एम सॉरी, सर !

अधिकारी : (अध्यक्ष से) मेरा आपसे अनुरोध है कि स्ट्राइक का नोटिस वापस ले लें। स्ट्राइक से आप लोगों की पढ़ाई ही सफर करती है।

अध्यक्ष : नोटिस तभी वापस होगा जब हमारी माँगें मान ली जाएँगी। यही हमारा आख़िरी फ़ैसला है।

प्राक्टर : आपकी पहली माँग यह है कि जिन चार लड़कों को रेस्टीकेट किया गया है उन्हें फिर दाखिला दे दिया जाए।

मन्त्री : जी हाँ ! औरों की तरह उन्हें भी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।

वाइसचान्सलर : अगर शिक्षा पाने में ही उनकी रुचि होती तो भला रेस्टीकेशन की नौबत ही क्यों आती ? (अधिकारी...

से) जनाब, वे लड़के पूरे लोफ़र हैं, आवारा। वे पढ़ने के लिए नहीं, तफ़रीह के लिए दाखिला चाहते हैं।

अध्यक्ष : इसमें उनका क्या दोष है? आजकल शिक्षा-संस्थाएँ लोफ़र और आवारा ढालनेवाली फैक्ट्रीज बन गई हैं।

मास्टर : हम आवारा बनाते हैं?

मन्त्री : ऑफ़ कोर्स! आज की शिक्षा-पद्धति और परीक्षा-प्रणाली न तो अच्छे नागरिक बनाती है और न अच्छे क्लर्क! मैकाले की पद्धति कम-से-कम बाबू तो तैयार करती थी।

मास्टर : पहले अभिनेता और नेता बनने से फ़ुरसत तो मिले?

अध्यक्ष : इसके लिए भी दोषी हम नहीं हैं।

वाइसचान्सलर : शिक्षा-पद्धति और परीक्षा-प्रणाली के लिए हम लोगों को क्यों कोसते हैं आप? सरकार से कहिए!

अधिकारी : सरकार को बीच में घसीटना ठीक नहीं। सरकार जो कुछ निर्णय करती है, वह शिक्षाविदों के सुझाव से ही करती है।

मन्त्री : आप तो ऐसा कहेंगे ही; सरकारी कर्मचारी जो ठहरे! ख़ैर, दोष चाहे जिसका हो, हमारा नहीं है।

मास्टर : दूसरों को दोषी ठहराना बहुत आसान है।

अध्यक्ष : हम पर अनुशासनहीनता का आरोप लगाया जाता है। लेकिन हमें अनुशासन भंग करने के लिए विवश कौन करता है? (क्रमशः तीनों की ओर उँगली उठाकर) आप, आप और आप!

वाइसचान्सलर : हम अनुशासनहीनता सिखाते हैं?

मास्टर : हम यही शिक्षा देते हैं?

अधिकारी : सरकार कहती है कि अनुशासन भंग करो?

अध्यक्ष : हम तो बड़ों का अनुगमन करते हैं। आज अनुशासन

भविष्य बनाने के लिए चिन्तित रहते हैं। अपने कॅरियर के लिए वे ऐसी गन्दी दलबन्दी करते हैं, अपने प्रतिद्वन्द्वियों पर ऐसी कीचड़ उछलाते हैं कि हम विद्यार्थियों को भी शर्म आती है।

वाइसचान्सलर : यह बकवास है।

प्राक्टर : सचाई पर कब तक झूठ का परदा पड़ा रह सकता है? हम छात्रों को उद्दण्ड बनाने का श्रेय ऐसे ही शिक्षकों पर है। जिन छात्रों को रेस्टीकेट किया गया है उनका यही अपराध है न कि उन्होंने यूनिवर्सिटी कम्पाउण्ड में एक प्रोफेसर का अपमान किया?

प्राक्टर : यह मामूली अपराध है?

अध्यक्ष : कभी आपने यह जानने की कोशिश की है कि आखिर लड़कों ने ऐसा क्यों किया? उन्हें पागल कुत्ते ने तो काटा नहीं था जो यूँ ही उनफ़ पड़े।

वाइसचान्सलर : आप कहना क्या चाहते हैं?

अध्यक्ष : आपको यह बताना चाहता हूँ कि उस काण्ड के पीछे किसी और का हाथ था।

प्राक्टर : किसका?

मन्त्री : एक दूसरे प्रोफेसर का।

वाइसचान्सलर : यह असम्भव है।

मन्त्री : आजकल कोई बात असम्भव नहीं है, श्रीमान् जी!

प्राक्टर : क्या आपके पास इस आरोप का कोई प्रमाण है? उस प्रोफेसर का नाम बताइए।

अध्यक्ष नाम बताने की भी जरूरत है? क्या आप नहीं जानते कि अपमानित होने वाले प्रोफेसर के प्रतियोगी कौन सज्जन हैं?

[प्रावटर और वाइसचान्सलर एक-दूसरे की ओर देखते हैं। अधिकारी महोदय खिड़की के पास जाकर पाइप सुलगाने लगते हैं।]

मन्त्री : छात्रों ने उन प्रोफेसर को सही बात बताकर क्षमा माँग ली है। प्रोफेसर साहब ने उन्हें तो क्षमा कर दिया है लेकिन वे अपने अपमान का बदला दूसरे प्रोफ़ेसर से ज़रूर लेंगे ! यह हम सूचनार्थ निवेदन कर रहे हैं।

अधिकारी : (सोफे की ओर बढ़ते हुए) दिस इज़ मोस्ट शॉकिंग !

अध्यक्ष : अब आप ही बताइए श्रीमान् जी, जहाँ विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों का यह हाल हो, स्कूल-कॉलिज के शिक्षक छात्रों को पढ़ाने से अधिक मैनेजमेंट को प्रसन्न करने में रुचि लेते हों, प्राइमरी स्कूलों के मास्टर बच्चों को पाठ रटने का आदेश देकर मेज पर पैर फैलाकर सोते हों, वहाँ के छात्र कैसे होंगे ?

मन्त्री : आज स्कूल-कॉलिज सरस्वती के पावन मन्दिर नहीं, पैसा कमाने के व्यावसायिक संस्थान बन गए हैं, श्रीमान् जी ! फ़ीस दो, खेलो-कूदो और घर जाओ। न शिक्षक छात्रों को पहचानते हैं और न छात्र शिक्षकों को ?

प्रावटर : एण्ड ह्वाट अबाउट योर होम्स ? बिगड़ते तो आप लोग घर से ही हैं।

मन्त्री : आज का छात्र घर तो सिर्फ सोने के लिए ही जाता है।

अध्यक्ष : हमसे यह आशा की जाती है कि हम शिक्षकों को वही आदर, सम्मान और श्रद्धा दें जो पुराने ज़माने में शिष्य अपने गुरुजनों को देते थे। पहले हमारे शिक्षक आदर, सम्मान और श्रद्धा के पात्र तो बनें !

वाइसचांसलर : (अधिकारी से) सुन रहे हैं आप इन लोगों की बातें ? सिर फिर गया है; भाषण-देते हैं; नेतागीरी

शौक चर्राया है ! यही सीखा है इन लोगों ने !

[अधिकारी अपने स्थान पर बैठ जाते हैं। कुछ बोलते नहीं।

मन्त्री : नेतागीरी का शौक पैदा किसने किया ? जब आजादी की लड़ाई चल रही थी, तब हमारे नेताओं ने छात्रों का आवाहन किया और हमारे छात्र स्वतन्त्रता-संग्राम में कूद पड़े। उन्होंने संघर्ष किया, लाठियाँ खाईं, जेल गए, गोलियाँ झेलीं।

अध्यक्ष : और जब भारत आजाद हो गया तो हमें राजनीति से दूर रहने का उपदेश दिया जाता है ! क्यों ? हमारी राजनैतिक जागरूकता, शक्ति और प्रतिभा निष्क्रिय कैसे रह सकती है ? नदी की धार को बहने के लिए राह चाहिए। उसे सही दिशा दो, नहीं तो वह गलत दिशा में बहकर सर्वनाश करेगी।

मन्त्री : अगर हमारी शक्ति को सृजन-कार्यों में लगाया जाता, हमें सैनिक शिक्षा दी जाती, सेवा-कार्य के लिए गाँवों में भेजा जाता तो देश का भी कल्याण होता और हमारी शक्ति को भी प्रॉपर चैनेल मिलता। हमने बड़ी-बड़ी योजनाएँ तो बनाईं लेकिन अच्छे इन्सान बनाने की कोशिश नहीं की।

वाइसचान्सलर : इसके लिए हम दोषी नहीं हैं।

मन्त्री : आप पहले भी यही बात कह चुके हैं।

[शोर की ध्वनि बढ़ती है। अधिकारी परस्पर चौंक उठते हैं। शेष लोग उनकी ओर व्यग्रता से देखते रहते हैं।]

अधिकारी : हाँ...! लग...! पोलिस !......क्या ? हैं... किसने ?...... भाई जी...! लग...लग...! [किन्तु

देम ··· ! ठीक है ··· ! (चोंगा रखकर सोफ़े की ओर बढ़ते हुए) भीड़ ने ईंट-पत्थर चलाकर कुछ सिपाहियों को घायल कर दिया है।

प्राक्टर : (अध्यक्ष से) यह शान्तिपूर्ण प्रदर्शन है !

अध्यक्ष : मैंने पहले ही कह दिया था। पुलिस को देखकर छात्रों का उत्तेजित होना स्वाभाविक है।

अधिकारी : (गम्भीर स्वर में) अपनी रक्षा के लिए पुलिस को डंडे चलाने के लिए मजबूर होना पड़ा।

[मन्त्री और अध्यक्ष उठकर खड़े हो जाते हैं।]

मन्त्री : लेकिन भीड़ में लड़कियाँ भी हैं।

अधिकारी : क़ानून अन्धा होता है, मिस्टर ! भीड़ को गैरकानूनी घोषित करके डिस्पर्स किया जा रहा है।

अध्यक्ष : ठीक है, अब समझौते की कोई ज़रूरत नहीं। जब आप लोग लाठी-डंडे को ही समस्या का हल समझते हैं तो यही सही। हमें जाने की आज्ञा दीजिए।

अधिकारी : आप नहीं जा सकते।

मन्त्री : आर, वी अण्डर अरेस्ट ?

[प्राक्टर और वाइसचान्सलर भी खड़े हो जाते हैं। वातावरण में तनाव आ गया है।]

अधिकारी : नहीं भाई ! पूरी बात तो सुन लीजिए ! कुछ स्टूडेंट्स नारे लगाते हुए इधर ही आ रहे हैं। मैं नहीं चाहता कोई अप्रिय घटना यहाँ घटे। आप लोग रहेंगे तो···

अध्यक्ष : (बीच में ही) अगर हमें बाहर न जाने दिया गया तो छात्र समझ सकते हैं कि हम कैद कर लिये गए हैं और तब जो अप्रिय घटना घटेगी उसकी कल्पना भी आप नहीं कर सकते।

अधिकारी : मुझे अफ़सोस है कि पुलिस को डण्डे चलाने पड़े।

मैं चाहता था कि स्टूडेण्ट्स पीसफ़ुली डिस्पर्स हो जाते और हम लोग यहाँ समस्या का कोई ऐसा हल···

मन्त्री : समस्या की जड़ें बहुत गहरी हैं, श्रीमान् जी! आँसूगैस, डण्डा, लाठी और गोली से समस्या हल नहीं होगी।

[दूर पर नारों का शोर—'वी० सी० साहब हाय हाय!,' 'हमारी माँगें पूरी हों!']

वाइसचान्सलर : (घबराकर) भीड़ इधर ही आ रही है!

अधिकारी : घबराइए नहीं! कोई अन्दर नहीं आ सकता।

मन्त्री : इस भीड़ में आपके छात्र ही हैं, वी० सी० साहब! उनसे कैसा डर!

प्राक्टर : भीड़ पागल होती है, पागल! (खिड़की से बाहर झाँककर) डर की कोई बात नहीं, सर! सिपाही गेट पर तैयार खड़े हैं। एकदम रेडी।

[नारों का शोर बढ़ता है—'वी० सी० साहब, बाहर आएँ!,' 'हमारी माँगें पूरी हों!.' 'हमारे नेता छोड़े जाएँ!']

अध्यक्ष : देखिए, हमें बाहर जाने दीजिए। अन्यथा···

प्राक्टर : भीड़ गेट पर आ गई! ओह···माई गॉड! (आकर धम्म से सोफ़े पर बैठ जाते हैं।)

वाइसचान्सलर : शुड आइ गो आउटसाइड?

अधिकारी : नहीं; भीड़ डिस्पर्स कर दी जाएगी। डोण्ट वरी!

[सहसा एक छात्रा का बाहर से प्रवेश। उसके सिर पर खून से सनी पट्टी बंधी है। साड़ी में भी खून के दाग़ हैं।]

प्राक्टर : (डाँटकर) हू आर यू? अन्दर कैसे आईं? (खड़े हो जाते हैं।)

अधिकारी : बेटी, तुम ?

छात्रा : हाँ पिता जी, मैं। आपको अपने खून की लाली दिखाने आई हूँ और यह भी कहने आई हूँ कि निहत्थे लड़के-लडकियों पर डण्डे बरसाना वीरता नहीं है।

अधिकारी : ओह ! तुम वहाँ गई ही क्यों ? मैंने मना कर दिया था।...भीड़ मे तुम्हें किसी ने पहचाना न होगा।

छात्रा : (रूखी हँसी हँसकर) नही, ऐसी बात नहीं है, पिता जी ! सब मुझे पहचानते थे, लेकिन मैंने एक कमज़ोर लड़की को बचाने के लिए डण्डे का वार अपने सिर पर ले लिया।

[नारे अब भी आ रहे हैं।]

मन्त्री : मुझे तुम पर गर्व है, बहन ! तुम्हारे खून की बूँद-बूँद का प्रतिशोध लिया जाएगा। (आवेश से काँपने लगता है।)

छात्रा : खून का बदला खून नहीं है, भाई ! हमारा डिमान्स्ट्रेशन पीसफ़ुल ही रहेगा। चलो, पब्लिक पार्क में विशाल सभा है। हमारा संघर्ष चलता रहेगा... चलता रहेगा। हम अपनी माँगें मनवाकर ही रहेंगे।

[नारों का शोर थम जाता है।]

वाइसचान्सलर : (प्राक्टर से) कल से यूनीवर्सिटी अनिश्चित काल के लिए बन्द। चौबीस घण्टे के अन्दर सब हॉस्टेल खाली हो जाएँ।

प्राक्टर : ओ के, सर !

अधिकारी : सब स्कूल-कॉलेज बन्द करा दिए जाएँगे। शान्ति और व्यवस्था के लिए यह ज़रूरी हो गया है। यूनीवर्सिटी-एरिया में धारा १४४ लगा दी जाएगी।

अध्यक्ष : बस, यही हल समझ में आया ?

[बाहर से 'मेरा बेटा, मेरा बेटा' कहता हुआ एक प्रौढ़ अभिभावक अन्दर आता है।]

अधिकारी : कौन हो तुम ? अन्दर किसने आने दिया ?

अभिभावक : मुझे मेरा बेटा चाहिए। मैं बाप हूँ—एक बेटे का बाप। कहाँ है मेरा बेटा ? कहाँ है मेरा लाल ?

प्रॉक्टर : पागल हुए हैं आप ? अगर आपका बेटा खो गया है तो थाने पर जाइए। यहाँ क्यों आए हैं ?

अभिभावक : मेरा बेटा विद्यार्थी है। सुबह से निकला है, अभी तक नहीं लौटा।

अधिकारी : तो हम क्या करें ? कृपा करके यहाँ से जाइए। हमारा वक्त खराब न कीजिए।

[अध्यक्ष कुछ बोलना चाहता है किन्तु छात्रा उसे मौन रहने का संकेत करती है। तब तक मंत्री खिड़की के पास जाकर गेट पर खड़े विद्यार्थियों को शान्त और आश्वस्त रहने का संकेत कर देता है।]

अभिभावक : (दुःखी होकर) तीन साल पहले एक जवान बेटे को खो चुका हूँ। वह भी पढ़ता था। उसके गोली लगी··· (सीने पर हाथ रखकर) यहाँ···और वह मर गया। यह दूसरा बेटा है। बताइए, उसे कहाँ खोजूँ ? आपने उसे जेल तो नहीं भेज दिया ? सुना है लाठी-चार्ज हुआ है ! घायल तो नहीं हो गया मेरा लाल ?

वाइसचान्सलर : हम कुछ नहीं जानते। अपने बेटे के बारे में (छात्रों की ओर संकेत करके) इन लोगों से पूछिए, जो हड़ताल करवाते हैं, विद्यार्थियों को भड़काते हैं। इनसे जवाब माँगिए। आपके बड़े बेटे के खून के लिए भी यही नेता जिम्मेदार हैं।

[अभिभावक पहली बार उनकी ओर देखता है। अभी तक जैसे उनकी उपस्थिति का भान ही नहीं था। छात्रा

के सिर पर खून से सनी पट्टी बंधी देखकर चौंकता है।]

अभिभावक : अरे, तुम तो घायल हो गई हो, बेटी! तुम्हारा बाप भी तुम्हारे लिए परेशान हो रहा होगा। जल्दी घर जाओ, बेटी! चलो, मैं तुम्हें पहुंचा दूं।

[अधिकारी का सिर झुक जाता है।]

छात्रा : मेरे ऐसे भाग्य कहाँ बापू, कि मेरा बाप मेरे लिए चिन्तित हो!

अभिभावक : हाय···यह क्या हो रहा है! जो खून देश का निर्माण कर सकता है, वह इस तरह बहाया जा रहा है! क्यों? (वाइसचान्सलर आदि की ओर मुड़कर) मुझे भी यह जानने का हक है। मैं अभिभावक हूँ···बच्चों की फीस भरता हूँ, सरकार को टैक्स देता हूँ।

डाक्टर : तो हम क्या करें! जाइए, हमें जरूरी समस्याएँ हल करनी हैं। यूनीवर्सिटी बन्द हो गई है। अब अपने बेटे को घर से बाहर न निकलने दें।

अभिभावक : आप यूनीवर्सिटी, स्कूल, कॉलेज बन्द कर सकते हैं, लेकिन हम अपने घर के द्वार कैसे बन्द कर दें? आप लोग भी पिता हैं, बोलिए! क्या मेरे प्रश्न का उत्तर···

मन्त्री : दीवारों से सिर टकराना बेकार है। ये लोग जीवित इन्सान नहीं, कायदे-कानून के दायरे में क़ैद मुर्दा दीवारें हैं—अन्धी, गूंगी और बहरी। आपके प्रश्न का उत्तर यहाँ नहीं मिलेगा।

अध्यक्ष : चलो बाबा! हम तुम्हारे बेटे को खोजेंगे।

अभिभावक : अरे, मेरी बात कोई नहीं समझता। मुझे एक बेटे की चिन्ता नहीं, मैं तो अपने करोड़ों बेटे-बेटियों के लिए चिन्तित हूँ। उनके भविष्य के प्रति···

छाया : (बीच में हो) उनका भविष्य हमेशा अन्धकार में नहीं रहेगा, बापू ! व्यवस्था बदलेगी, ज़रूर बदलेगी ! हमारे बलिदान व्यर्थ नहीं जाएँगे। चलो बापू, तुम्हारे अनगिन बेटे-बेटियाँ तुम्हारी राह देख रहे हैं ।

अधिकारी : बेटी !

[छाया अभिभावक को धीरे-धीरे बाहर ले जाती है। अध्यक्ष और मन्त्री भी द्वार की ओर बढ़ते हैं ।]

डाक्टर : यह न भूलिएगा कि यूनीवर्सिटी कल से बन्द है !

मन्त्री : (मुड़कर) और धारा १४४ लग गई है ।

अध्यक्ष : और आप लोग भी यह न भूलें कि कभी-न-कभी तो यूनीवर्सिटी खुलेगी ही । देन वी शैल मीट अगेन !

[दोनों तेज़ी से बाहर जाते हैं ।]

अधिकारी : (वाइसचान्सलर से) क्या ·· क्या समस्या का यही हल है ?

वाइसचान्सलर : मैं नहीं जानता । मैं थक गया हूँ · बहुत थक गया हूँ !

[बाहर से नारों की आवाज़ आती है जो क्रमशः दूर होती जाती है । डाक्टर खिड़की के पास जाते हैं । वाइसचान्सलर शिथिल-से अध्ययन-कक्ष की ओर बढ़ते हैं । अधिकारी फ़ोन का चोंगा उठाकर कोई नम्बर मिलाने लगते हैं और धीरे-धीरे परदा गिरता है ।]

चाय का प्याला और तूफान

[गंभीर समस्या को हल्के-फुल्के ढंग से प्रस्तुत करने वाला एकांकी]

क्या आपने कभी चाय के प्याले में तूफ़ान की हलचल देखी है ? नहीं देखी ? तो लीजिए, पढ़िए इस एकांकी को और चाय की चुस्कियों का भी मजा लीजिए तथा भ्रष्टाचार के भयंकर तूफ़ान की हलचल का भी अनुभव कीजिए।

पात्र-परिचय

चन्दू नाटक का नायक ; अवस्था २६ वर्ष।
सावित्री चन्दू की पत्नी ; अवस्था २४ वर्ष।
तारा चन्दू की बहन ; अवस्था १६ वर्ष।
करोड़ीमल धनी सेठ; अवस्था ६० वर्ष।
पुलिस-अधिकारी, सिपाही आदि।



स्थान चन्दू की बैठक



समय सायंकाल

[तारा तख्त पर लेटी हुई एक मोटी-सी किताब पढ़ रही है।]

तारा : (पढ़ती हुई) यह सोचना कि व्यक्ति को अपराध के कीड़े अपने माँ-बाप के खून से मिलते हैं, गलत है। यह जरूरी नहीं कि एक खूनी पिता की औलाद खूनी ही हो। अपराध-वृत्ति हमें विरासत में नहीं मिलती। अनेक प्रसिद्ध समाज-शास्त्रियों का मत है कि...

सावित्री : (अन्दर से) तारा...ओ तारा!

तारा : क्या है, भाभी?

सावित्री : साढ़े चार बज गए।

तारा : बस, दो पेज और पढ़ लूँ।

सावित्री : (प्रवेश करके) हद हो गई। ठीक एक बजे से बैठी पढ़ रही है और...

तारा : (बीच में ही) बैठी नहीं, तख्त पर आराम से लेटी। करेक्शन प्लीज!

सावित्री : अच्छा बाबा, तख्त पर आराम से लेटी। बस! अब तो खुश है?

तारा : ऑफ कोर्स। (उठकर बैठती हुई) एनी ऑब्जेक्शन?

सावित्री : देख, अगर अपने भैया की नकल की तो अच्छा नहीं होगा।

तारा : यानी कि हद हो गई। तुम तो बात-बात पर ऐसी गरजती हो यानी कि जैसे तूफ़ान···आई मीन थण्डर।

सावित्री : वण्डरफुल।

तारा : *हियर···हियर।*

[दोनों हँसती हैं।]

तारा : देखो भाभी, इस किताब में साफ़ लिखा है कि···

सावित्री : (किताब छीनकर पटकती हुई) तू ऐसे नहीं मानेगी न! बी० ए० की पढ़ाई न हुई गोया रामायण का अखंड पाठ हो गई। तेरे भैया ने बिना पढ़े बी० ए० कर लिया था। मालूम है?

तारा : तीन साल फ़ेल होने के बाद। वह भी किस्मत ज़ोरदार थी जो पास हो गए और सरकारी नौकरी मिल गई, नहीं तो कोई नाटक कम्पनी खोलकर बिना टिकट का तमाशा दिखाते या किसी फ़िल्म कम्पनी में जोकर बनकर···

सावित्री : (बीच में ही) अपने भैया की हँसी उड़ाती है। शर्म नहीं आती?

तारा : अच्छा जी! और जब तुम उन्हें खरी-खोटी सुनाती हो तब···?

सावित्री : तब तो उनकी हिमायती बनकर मुझसे खूब लड़ती है।

तारा : *क्यों न लड़ूँ! मेरे भैया जो हैं!*

सावित्री : आहाहा! बड़े अच्छे हैं तेरे भैया?

तारा : क्या बुराई है उनमें? शहर ऊपर है मेरे चन्दू भैया!

सावित्री : बस···बस···रहने दे! आज जल्दी आने को कह गए थे। जाकर चाय का पानी चढ़ा दे। वरना आते ही कहेंगे···

तारा : (चन्दू के लहजे की नकल करके) यानी कि हद हो गई, सब्बो! अभी तक चाय नहीं बनी?

सावित्री : (हँसकर) तू भी अपने भैया से ड्रामा करना सीख गई है।

[दरवाजे पर दस्तक]

तारा : लगता है, भैया आ गए।

करोड़ीमल : (बाहर से) मैंने कहा, चन्दू बाबू घर में हैं, लक्ष्मी जी की दया से ?

सावित्री : यह तो कोई और ही मालूम होता है। मैं अन्दर जाती हूँ। दरवाजा खोल दे। (प्रस्थान)

[दरवाजे पर दस्तक होती रहती है।]

तारा : (द्वार खोलकर) भैया अभी ऑफिस से नहीं आए।

करोड़ीमल : मैंने कहा, कोई बात नहीं…कोई बात नहीं। हाँ, यह घर तो चन्दू बाबू का ही है, लक्ष्मी जी की दया से ?

तारा : जी हाँ, घर तो उन्हीं का है।

करोड़ीमल : मैंने कहा, तब ठीक है। मैं इसी तख्त पर विराजता हूँ, लक्ष्मी जी की दया से। (बैठकर) हाँ बेटी, तुम्हारा नाम?

तारा : तारा।

करोड़ीमल : चन्दू बाबू की बहन हो, मैंने कहा ?

तारा : जी हाँ ! आपका परिचय · !

करोड़ीमल : मैंने कहा, हमारा परिचय ही क्या ? नाम है करोड़ीमल, लक्ष्मी जी की दया से, लेकिन गाँठ में लाख-दो-लाख भी नहीं। छोटा-मोटा धन्धा है, मैंने कहा। और बस, किसी तरह पेट भर जाता है, लक्ष्मी जी की दया से।

तारा : भैया से कोई खास काम है।

करोड़ीमल : मैंने कहा, खास काम न होता तो तकलीफ देने क्यों आता, लक्ष्मी जी की दया से। आम काम तो दफ़्तर में ही सलट जाते हैं। हाँ…… मैंने कहा, तुम्हारी भाभी घर में नहीं हैं क्या ?

तारा : अन्दर हैं। क्यों ?

करोड़ीमल : मैंने कहा, वे तो मेरठ की हैं ! सावित्री नाम है न ?

तारा : (विस्मय से) आपको कैसे मालूम ?

करोड़ीमल : (हँसकर) मैंने कहा, अपनी भी रिश्तेदारी है मेरठ में, लक्ष्मी जी की दया से। सावित्री बिटिया के पिता जी तो हमें अच्छी तरह जानते हैं, मैंने कहा।

तारा : अच्छा !

करोड़ीमल : हाँ ! मैंने कहा, जरा बुलाओ तो सावित्री बिटिया को। पहले देखा था, तब तो नन्ही-सी थी, लक्ष्मी जी की दया से।

तारा : (ऊँचे स्वर से) भाभी ! यहाँ आओ ज़रा। तुम्हारे पीहर के परिचित आए हैं।

करोड़ीमल : मैंने कहा, तुम पढ़ती हो अभी ?

तारा : जी हाँ ! इस साल बी० ए० फ़ाइनल में हूँ।

सावित्री : (प्रवेश करके) नमस्ते !

करोड़ीमल : मैंने कहा, सुखी रहो, सौभाग्यवती रहो ! फूलो-फलो! हाँ, हमें पहचाना, लक्ष्मी जी की दया से ?

सावित्री : जी···मैं पहचान नहीं पाई।

करोड़ीमल : *मैंने कहा, कैसे पहचानोगी ? सालों बाद देख रही हो,* लक्ष्मी जी की दया से। हाँ, तुमने मेरठ के सेठ छदामीमल का नाम तो सुना होगा ?

सावित्री : वे तो हमारे मुहल्ले में ही रहते हैं।

करोड़ीमल : मैंने कहा, बस यह समझ लो कि मैं उनके ही घर का आदमी हूँ। वे मेरे ताऊ के लड़के के साले के नाना के बहनोई के जमाई हैं, लक्ष्मी जी की दया से।

तारा : (हँसकर) बहुत पास का रिश्ता है।

करोड़ीमल : मैंने कहा, पास-दूर में क्या रखा है ? नाता तो मन का होता है, लक्ष्मी जी की दया से। मानो तो देवता, नहीं तो पत्थर, मैंने कहा।

सावित्री : अरे तारा, इनके लिए चाय और नाश्ते का तो प्रबन्ध...

करोड़ीमल : (बीच में ही) मैंने कहा, तुम्हारे घर कैसे खाऊँगा, तुम तो मेरी बेटी के बराबर हो, लक्ष्मी जी की दया से।

सावित्री : अगर आप उनसे दफ़्तर में मिल लेते, तो...

करोड़ीमल : मिला था, मैंने कहा। उनका इशारा पाकर ही यहाँ आया हूँ, लक्ष्मी जी की दया से। अहाहा! बड़े मिलनसार और सज्जन पुरुष हैं चन्दू बाबू। हाँ बेटी, बुरा न मानो तो एक बात पूछूँ?...मैंने कहा, बैठक में रेडियो वगैरह नहीं दिखाई पड़ता, सोफ़ासेट भी नहीं है, लक्ष्मी जी की दया से।

तारा : बापू ने कहा है न—सादा जीवन, उच्च विचार।

सावित्री : दो-ढाई सौ में आजकल पेट भरना मुश्किल है, फिर रेडियो और सोफ़ासेट कहाँ से आए?

करोड़ीमल : सो तो है ही, मैंने कहा। मुझी को देखो। महीने में चार-पाँच हज़ार की कमाई है, लक्ष्मी जी की दया से, लेकिन फिर भी खर्च पूरा नहीं पड़ता।

तारा : (विस्मय से) चार-पाँच हज़ार कमाते हैं आप?

करोड़ीमल : मैंने कहा, बड़े दन्द-फन्द करने के बाद पेट भरता है, लक्ष्मी जी की दया से।

सावित्री : लेकिन दन्द-फन्द करना तो अच्छी बात नहीं।

करोड़ीमल : मैंने कहा, अगर अच्छा-बुरा सोचूँ तो बच्चे भूखे मर जाएँ, लक्ष्मी जी की दया से।

तारा : क्या व्यवसाय करते हैं आप?

करोड़ीमल : मैंने कहा, यही शक्कर और अनाज का धन्धा है, लक्ष्मी जी की दया से।

सावित्री : तभी शक्कर और अनाज की कीमतें बढ़ती जा रही हैं।

करोड़ीमल : मैंने कहा, कीमतें बढ़ किस चीज़ की नहीं रही हैं, लक्ष्मी

जी की दया से ? हाँ, तुम्हें तो शक्कर की दिक्कत नहीं होती, मैंने कहा ?

सावित्री : जितनी हमें राशन कार्ड से मिलती है, उससे गुज़र हो जाती है ।

करोड़ीमल : मैंने कहा, कहो तो दस-बीस किलो भिजवा दूं । घर की बात है, लक्ष्मी जी की दया से ।

तारा : बड़े दयालु हैं आप !

सावित्री : जी नहीं, धन्यवाद ! हमें नहीं चाहिए । और हाँ, अगर आप उनसे कल दफ़्तर में ही मिल लें तो ठीक रहे । वे घर पर किसी से मिलना पसन्द नहीं करते ।

चन्दू : (प्रवेश करके) यानी कि हद हो गई, सब्बो ! तुम्हें यह भी नहीं मालूम कि मेहमान, आई मीन गेस्ट से कैसे बिहेव करना चाहिए । कहिए सेठ जी, कोई कष्ट तो नहीं हुआ?

करोड़ीमल : कष्ट कैसा, मैंने कहा ? सब आनन्द है, लक्ष्मी जी की दया से ।

चन्दू : यानी की आपकी तरह अगर हम गरीबों पर भी लक्ष्मी जी की दया, आई मीन मर्सी हो जाए तो सेण्ट-पर-सेण्ट किस्मत ही बदल जाए । (कुर्सी पर बैठ जाता है।)

करोड़ीमल : मैंने कहा, होगी क्यों नहीं ? आपकी कलम में लक्ष्मी का वास है, लक्ष्मी जी की दया से ।

चन्दू : यानी कि सब्बो, सेठ जी को जल-पान कराया या नहीं ?

तारा सेठ जी की मेरठ में रिश्तेदारी है । ये भाभी को बेटी के बराबर मानते हैं । इसलिए…

चन्दू : (बीच में ही हँसकर) ओह, समझा । यानी कि आप भी दकियानूसी, आई मीन सेण्ट-पर-सेण्ट आर्थोडॉक्स टाइप के आदमी हैं, सेठ जी !

करोड़ीमल : जी, लक्ष्मी जी की दया से ।

घन्दू : यानी कि मेरे लिए तो चाय बना दो, सब्बो ! थका-हारा दफ्तर से आया हूँ, आई मीन…सेण्ट-पर-सेण्ट…

तारा : (बीच में ही) बस भैया, बस ! आपका मतलब हम समझ गईं। आई मीन, वी आर गोइङ्ग। चलो भाभी ! (सावित्री और तारा अन्दर जाती हैं।)

करोड़ीमल : मैंने कहा, आपकी बहन भी खूब है, लक्ष्मी जी की दया से।

घन्दू : यानी कि लक्ष्मी जी की दया से या लक्ष्मी जी के सेण्ट-पर-सेण्ट कोप से ! सेठ जी, आजकल हर लड़की, आई मीन चाहे वह डाक्टर हो या सिस्टर, दस हजार की डिग्री लेकर पैदा होती है। मेरा मतलब तो आप…आई मीन…

करोड़ीमल : (बीच में ही) समझ गया, मैंने कहा समझ गया। मेरे घर में भी चार लड़कियाँ हैं, लक्ष्मी मां की दया से। उन्हीं के लिए दन्द-फन्द करता हूँ, मैंने कहा वरना अकेली जान को क्या…! रूखा-सूखा जो मिल जाए सो ठीक है, लक्ष्मी जी की दया से। मैंने कहा, आप बार-बार घड़ी क्यों देख रहे हैं ? कहीं जाना है, लक्ष्मी जी की दया से ?

घन्दू : यानी कि बात यह है कि मैं वक्त का बहुत पाबन्द हूँ, आई मीन सेण्ट-पर-सेण्ट पंक्चुअल। टी-टाइम हो रहा है और अभी तक…(ऊँचे स्वर में) यानी कि सब्बो, तुम्हारी चाय तो बीरबल की खिचड़ी हो गई। आई मीन, जरा जल्दी हाथ चलाओ न !

तारा : (अन्दर से) पानी चढ़ा दिया है, भैया ! अभी लाई दो मिनट में।

करोड़ीमल : मैंने कहा, आज्ञा हो तो अब मतलब की बात हो जाए, लक्ष्मी जी की दया से !

घन्दू : यानी कि हाँ-हाँ। पहले सेण्ट-पर-सेण्ट मतलब की बात फिर और कुछ।

करोड़ीमल : मैंने कहा, मेरी मुसीबत की दास्तान तो मुनीम जी सुनाई ही होगी, लक्ष्मी जी की दया से ?

चन्दू : यानी कि मुझे सेण्ट-पर-सेण्ट नॉलिज है आपके केस की। आपका गैर-कानूनी, श्राई मीन इल्लीगल स्टॉक पकड़ा गया है। यानी कि आपकी बहियाँ भी...

करोड़ीमल : मैंने कहा, यही तो मुसीबत है। सौ-दो-सौ बोरों की जब्ती का गम नहीं, लक्ष्मी जी दया से...लेकिन बहियों में...

चन्दू : यानी कि सेण्ट-पर-सेण्ट गड़बड़-घोटाला है।

करोड़ीमल : मैंने कहा, आपकी कलम का एक इशारा मेरा उद्धार कर सकता है, लक्ष्मी जी की दया से।

चन्दू : यानी कि तभी आप कह रहे थे कि मेरी कलम में लक्ष्मी का वास है।

करोड़ीमल : मैंने कहा, अकलमन्द को इशारा काफी होता है, चन्दू बाबू! मुनीम जी ने भी इशारा किया होगा, लक्ष्मी जी की दया से ?

चन्दू : यानी कि सेण्ट-पर-सेण्ट किया था। तभी तो आपको मैंने घर पर मिलने के लिए कहा था। आई मीन...

करोड़ीमल : मैंने कहा, आपका इशारा मैं भी समझ गया था, बिल्कुल तैयार होकर आया हूँ लक्ष्मी जी की दया से। (हँसता है)

चन्दू : यानी कि कितनी तैयारी है...आई मीन...

करोड़ीमल : मैंने कहा सौ-सौ के दस माई-बाप है, लक्ष्मी जी की दया से।

चन्दू : यानी कि बस ? इतना बड़ा काम और इतना कम मेहनताना !

करोड़ीमल : मैंने कहा, बारह कर दूँगा; सौ-दो-सौ की बात नहीं, लक्ष्मी जी दया से।

चन्दू : यानी कि बीस हों तो...

करोड़ीमल : बीस तो बहुत हैं, मैंने कहा।...पन्द्रह...

सावित्री : (प्रवेश करके) हूँ...तो यह ईमानदारी और कर्तव्य का सौदा हो रहा है !

चन्दू : यानी कि तुम अंदर जाओ, सब्बो ! हमारे बीच में दखल देने का तुम्हें कोई हक नहीं, माई मीन नो राइट।

करोड़ीमल : मैंने कहा, चन्दू बाबू ठीक कह रहे हैं, लक्ष्मी जी की दया से। तुम अंदर जाओ, बेटी।

सावित्री : खबरदार जो मुझे बेटी कहा ! क्या इसीलिए आपने मेरठ की जान-पहचान निकाली थी !

तारा : (प्रवेश करके) क्या बात है, भाभी !

सावित्री : तुम्हारे भैया चन्द-फन्द पसन्द करने वाले इन सेठ जी के हाथ कागज़ के चन्द रंगीन टुकड़ों पर अपनी अंतरात्मा का सौदा कर रहे हैं।

चन्दू : (उठकर) गेट आउट आइ से। तारा, सब्बो को अंदर ले जाओ। यानी कि हद हो गई...अपने ही घर में मैं आज़ादी से बात भी नहीं कर सकता ?

तारा : भैया ! जो कुछ भाभी कह रही हैं, क्या वह सत्य है ?

सावित्री : मैंने अपने कानों से सुना है, तारा ! तू तो रसोई में थी लेकिन मैं...

चन्दू : यानी कि तुम अंदर जाओगी या नहीं ?

सावित्री : (अपनी ही धुन में) सेठ जी, आपके पैर पड़ती हूँ। चले जाइए यहाँ से। हमारी सुखी गृहस्थी में भयंकर तूफ़ान क्यों ला रहे हैं ?

करोड़ीमल : (उठकर) मैंने कहा, समझ से काम लो, बेटी ! दुनिया के काम ऐसे ही चलते हैं, लक्ष्मी जी की दया से। आज-कल ईमानदारी का मतलब है गरीबी और मुफलिसी। मैंने कहा, बहती गंगा में हाथ धोना ही बुद्धिमानी है, लक्ष्मी जी की दया से।

तारा : लेकिन घूस लेना और देना अपराध है।

करोड़ीमल : मैंने कहा, अपराध की परिभाषा भी समय के साथ बदलती रहती है, लक्ष्मी जी की दया से। भ्रष्टाचार आज का सबसे बड़ा शिष्टाचार है। इसके बिना काम नहीं चल सकता, लक्ष्मी जी की दया से।

सावित्री : सेठ जी की मीठी-मीठी बातों में फँसकर अपना धर्म न बिगाड़िए! विनती करती हूँ! हमारे लिए काली कमाई की कानी कौड़ी लेना भी पाप है।

चन्दू : यानी कि बहस मत करो, आई मीन डोण्ट आर्गू। ओह! पाँच बजने में सिर्फ दो मिनट बाकी हैं, माई मीन टी-टाइम। तारा, चाय लाओ···ऐटवन्स! और सब्बो··· तुम भी अन्दर जाओ लाइक अ फ़ेथफ़ुल वाइफ।

सावित्री : फ़ेथफ़ुल वाइफ हूँ तभी तो समझा रही हूँ। मान जाइए! लालच के इस तूफान में पड़कर ··

चन्दू : यानी कि तूफान दो मिनट बाद शान्त हो जाएगा, गो अवे।

तारा : चलो, भाभी!

सावित्री : जाती हूँ, लेकिन याद रखना अगर आपने कर्तव्य से गिरकर घूस का एक पैसा भी लिया तो मुझे जिन्दा नहीं पाएँगे।
[तारा और सावित्री का प्रस्थान]

चन्दू : यानी कि हद हो गई! इन औरतों को भगवान ने सेण्ट-पर-सेण्ट मूर्ख बनाया है···आई मीन दिमाग तो दिया ही नहीं। यानी कि सावित्री की बातों का बुरा न मानिएगा, सेठ जी, आई मीन डोण्ट माइण्ड।

करोड़ीमल : मैंने कहा, कोई बात नहीं।···हाँ, तो फिर पन्द्रह पक्के रहे, लक्ष्मी जी की दया से?

चन्दू : यानी कि सारा मूड ही खराब हो गया। लाइए निकालिए! पन्द्रह ही सही। (ऊँचे स्वर में) यानी कि चाय

लाओ ! टी-टाइम हो गया !

करोड़ीमल : (जेब से नोट निकालकर देता हुआ) मैंने कहा, यह लीजिये! एकदम करारे नोट है, लक्ष्मीजी की दया से !

[सहसा पुलिस अधिकारियों का प्रवेश]

अधिकारी : सेठ जी, रिश्वत देने के आरोप में आप गिरफ़्तार किये जाते हैं। दरोगा जी, नोट अपने अधिकार में ले लीजिये !

करोड़ीमल : मैंने कहा, यह क्या चक्कर है, चन्दू बाबू ?

चन्दू : (हँसकर) यानी कि यह आपके दन्द और मेरे फन्द का चक्कर है, सेठ जी !

करोड़ीमल : मैंने कहा, यह तो सरासर अन्याय है। अगर मुझे पकड़ते हैं तो इन्हें भी पकड़ो, लक्ष्मी जी की दया से। इन्होंने मुझसे घूस माँगी थी।

[सावित्री और तारा का प्रवेश]

सावित्री : सेठ जी ठीक कह रहे हैं। मेरे पति भी अपराधी हैं।

तारा : भाभी···

सावित्री : तू चुप रह, तारा ! मेरे पति ने भी अपराध किया है। इन्हें भी कैद कीजिए ! मेरे मना करने पर भी यह नहीं माने और···

अधिकारी : (हँसकर) मिस्टर चन्दू अगर आपकी बात मान लेते तो भ्रष्टाचारियों के सरताज सेठ करोड़ीमल कानून की गिरफ़्त में कैसे आते ?

करोड़ीमल : मैंने कहा, तो यह जाल था ? धोखा ? सुनिए साहब ! मैं निरपराध हूँ, लक्ष्मी जी की दया से।

अधिकारी : जो कुछ कहना हो अदालत में कहिएगा, सेठ जी, चलिए!

करोड़ीमल : मैंने कहा, चलता हूँ। मगर अदालत में एक-एक को देख लूँगा, लक्ष्मी जी की दया से।

[अधिकारियों के साथ प्रस्थान]

तारा : यह क्या चक्कर था, भैया ! मेरी समझ में तो नहीं आया।
चन्दू : यानी की सीधी बात है। वह मुझे घूस देना चाहता था। मैंने उसे यहां भेजकर अधिकारियो, आई मीन अथॉरिटीज से बात की और बस, यानी कि उसे पकड़ने के लिए जाल, आई मीन ट्रैप तैयार हो गया।
तारा : तो आप एक्टिंग कर रहे थे ?
चन्दू : ऑफ कोर्स, यानी कि स्कीम के मुताबिक ठीक पाँच बजे मैंने सिगनल दे दिया यानी कि जब उसके हाथ मे नोट थे।
तारा : सिगनल !
चन्दू : यानी कि सुना नही था ? (ऊँचे स्वर में) चाय ले आओ! टी-टाइम हो गया ! आई मीन, यही सिगनल था।
तारा : ओह, मैं समझी थी, आप सचमुच चाय माँग रहे हैं।
चन्दू : यानी कि अब ले आओ, आई मीन एटवन्स ?
तारा : (जाती हुई) अभी लाई, भैया !
चन्दू : यानी कि अब तो तुम्हे जान देने की जरूरत नहीं है ?
सावित्री : मैं···मैं बहुत लज्जित हूँ। आपको गलत समझकर न जाने क्या-क्या बक गई थी। माफ करें !
चन्दू : यानी कि माफ़ी कैसी ? मुझे तुम पर गर्व है, आई मीन आई एम प्राउड ऑफ़ यू। अच्छा, अब तूफान तो शान्त हो गया, ह्वाट अबाउट अ कप ऑफ टी, आई मीन तुम्हारे हाथ का बना चाय का प्याला ?
सावित्री : जरूर मिलेगा।
चन्दू : यानी की अपने हाथ से बनाओगी न ?
सावित्री : कह तो दिया बाबा···हाँ···हाँ···हाँ···!
[दोनों हँसते है। तारा चाय की ट्रे लिये आती है। तभी पर्दा गिरता है]

ग्रहों का चक्कर

[हास्य-नाटिका]

ग्रहों का मनुष्य के जीवन पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। उसकी सफलता-असफलता, सम्पन्नता-विपन्नता का श्रेय ग्रहों को ही है। पहले तो चन्दू ऐसी बातें सुनकर हँसता था परन्तु ग्रहों के चक्कर ने उसे नाच नचा ही दिया।

पात्र-परिचय

चंदू	नायक
सावित्री	नायिका
शर्माजी	सी० आई० डी० इन्सपेक्टर
	पंडितजी, ज्योतिषी

⊙

स्थान	चन्दू की बैठक

⊙

समय	सुबह ९ बजे

[बैठक साधारण है। एक तख्त पड़ा है। कुछ कुर्सियाँ हैं। पर्दा उठता है। सावित्री बैठी हुई अखबार देख रही है। बाहर से चन्दू आता है।]

चन्दू : यानी कि हद हो गई, सब्बो ! नौ बज गए और तुमने अभी तक चूल्हा नहीं जलाया ?

सावित्री : जल जाएगा। ऐसी जल्दी क्या है ?

चन्दू : यानी कि तुम समझती हो, आज सण्डे है।

सावित्री : जी नहीं ! अच्छी तरह जानती हूँ, आज शनिवार है।

चन्दू : फिर ? यानी कि मुझे दफ्तर जाना है और तुमने अभी तक···

सावित्री : (बीच में ही) आज आप दफ्तर नहीं जाएँगे ?

चन्दू : ह्वाट···? यानी कि क्यों नहीं जाऊँगा ?

सावित्री : मैं कहती हूँ इसलिए।

चन्दू : यू आर नॉट माई बॉस। यानी कि यह भी खूब रही। देखो सब्बो, मजाक छोड़ो और जल्दी से···

सावित्री : मैं मजाक करूँगी आपसे ?

चन्दू : ह्वाई नॉट ? यू आर माई वाइफ, आई मीन धर्मपत्नी !

सावित्री : इसीलिए तो कह रही हूँ। आज आप दफ्तर नहीं जाएँगे।

चन्दू : लेकिन क्यों ? यानी कि खैर तो है ? आई मीन, तुम्हारे

दुश्मनों की तबीयत अलील तो नहीं ? (चन्दू उसके पास बैठ जाता है।)

सावित्री : जी नहीं ! तबीयत तो ठीक है।

चन्दू : यानी कि फिर क्यों रोक रही हो, आई मीन ह्वाई ?

सावित्री : आज शनिवार है। आपके शनि अच्छे नहीं हैं।

चन्दू : (हँसकर) यानी कि तुम्हारा भी जवाब नहीं, सब्बो ! देखो, एक काम करो। परमपिता परमेश्वर, आई मीन आल-माइटी गॉड से प्रार्थना करो कि वीक, आई मीन सप्ताह से शनिवार का दिन ही निकाल दें। यानी कि मुझे भी आराम हो जाएगा।

सावित्री : आप हँस रहे है ? मैं सच कह रही हूँ, आज का दिन आपके लिए बहुत अशुभ है।

चन्दू : नान्सेन्स !

सावित्री : मैंने अखबार में राशिफल देखा है। आपकी राशिवालों को बहुत सतर्क रहने की जरूरत है क्योंकि···क्योंकि···कोई दुर्घटना होने की आशंका है।

चन्दू : यू मीन एक्सीडेण्ट ?

सावित्री : जी हाँ ! आई मीन एक्सीडेण्ट।

चन्दू : यानी कि तुम भविष्य-फल पर यकीन करती हो ?

सावित्री : करना ही पड़ता है।

चन्दू : देखो सब्बो, मैं सर्विस करता हूँ, सर्विस ! यानी कि बाप-दादों की दूकान नहीं है कि जब जी चाहे जाएँ और जब जी चाहे न जाएँ। अगर मैं इस तरह दफ्तर से गोल होने लगूँगा तो बॉस दूसरे दिन से डिसमिस यानी सेण्ट-पर-सेण्ट डिसमिस कर देगा।

सावित्री : दफ्तर से गोल होने को कौन कह रहा है ? मैंने वर्माजी से

लेते जाएँगे।

चन्दू : यानी कि तुमने वर्माजी से कहला भी दिया ?

सावित्री : जी हाँ। और मैंने एक पंडितजी को भी बुलवाया है।

चन्दू : पंडितजी को ? यानी कि किसलिए ?

सावित्री : आपकी जन्म-कुण्डली देखने के लिए। आखिर पता भी तो चले कि कौन-कौन से ग्रह खराब हैं।

चन्दू : यानी कि मैं तुमसे एक हज़ार एक बार कह चुका हूँ कि मुझे ग्रहों-ग्रहों पर ज़रा भी यकीन नहीं। यह सब बकवास हैं बकवास, आई मीन नान्सेन्स ! देखो सब्बो, तुम्हारे कहने से मैंने चार-चार मकान बदले ! यानी कि नहीं बदले ?

सावित्री : बदले ! लेकिन मुझे पागल कुत्ते ने थोड़े ही काटा था जो यूँ ही मकान बदलने के लिए कहती ! पहले मकान में मैं हमेशा बीमार रहती थी, दूसरे का दरवाजा दक्खिन की ओर था, तीसरा तिकोना था और चौथा भी हमें नहीं फला।

चन्दू : यानी कि इसीलिए हमने पाँचवें, आई मीन प्रेजेण्ट घर को हवन करके और सत्यनारायण की कथा सुनकर शुद्ध कर लिया।

सावित्री : तब भी तो नहीं फल रहा है मुआ ! जब देखो तब रोग''' कभी खाँसी है तो कभी जुकाम ; कभी सिर दर्द और कभी बुखार। रोज तो बीमार बने रहते हो। इसीलिए मैंने सोचा, दोष घर का नहीं, आपके ग्रहों का है।

चन्दू : हूँ'''यानी कि तो इसलिए जन्म-कुण्डली दिखलाई जाएगी ?

सावित्री : जी हाँ ! ग्रहों पर आपको चाहे विश्वास न हो पर मैं कहती हूँ उनका प्रभाव हम पर जरूर पड़ता है।

पंडितजी : (बाहर से) जो है सो, चन्दू बाबू हैं घर में ?

सावित्री : लो, पंडितजी आ गए ! (ऊँचे स्वर में) चले आइए पंडितजी ! (धीमे स्वर में) उनके सामने ऐसी-वैसी बात न,

कर बैठना !

[पण्डितजी का प्रवेश।]

सावित्री : आइए, पण्डितजी ! विराजिए !

[पण्डितजी तख्त पर बैठ जाते हैं।]

पंडितजी : प्रसन्न रहो ! जो है सो सुखी रहो !...सदा सौभाग्यवती रहो, दूधों नहाओ, पूतों फलो, जो है सो ! हाँ...कहिए कैसे स्मरण किया ?

सावित्री : यह इनकी जन्म-कुण्डली है ! जरा देखकर बताइए, कैसी ग्रह-दशा है।

पंडितजी : (कुण्डली लेकर देखते हुए) अहा ! कुंडली तो बड़ी चमत्कारी है, जो है सो। बड़े भाग्यवान हैं !

चन्दू : यानी कि हँसी क्यों करते हैं, पंडितजी ?

सावित्री : इन्हें तो कोई-न-कोई कष्ट बना ही रहता है—कभी शारीरिक और कभी मानसिक।

पंडितजी : पहले पूरी बात तो सुन लीजिए, जो है सो। कुण्डली चमत्कारी है, परन्तु भाग्य के सूर्य पर राहु-केतु की कुदृष्टि है। इसीलिए कष्ट रहता है, जो है सो। ऐं ! यह तो शनि महाराज भी रूठे हुए हैं। जो है सो, साढ़े साती चल रही है...साढ़े साती। शिव शिव शिव ! और उस पर भी वक्रगति ! बड़ी अमंगलकारी ग्रहदशा है, चन्दू बाबू !

सावित्री : शनि महाराज के कोप के कारण ही सालभर में चार घर बदल चुके हैं। यह पाँचवाँ है।

चन्दू : यानी कि शायद अगले महीने इसे भी बदलना पड़े।

पंडितजी : चिन्ता की कोई बात नहीं, जो है सो। ग्रहों को शान्त करने का भी विधान है।

सावित्री : राहु-केतु और शनि का कोप शान्त हो जायेगा पंडितजी ?

पंडितजी : क्यों नहीं, जो है सो ! पूजा पाठ, जप-तप, यज्ञ-हवन और

दान-पुण्य में बड़ी शक्ति है। आजकल लोग इनकी महिमा को नहीं समझते, जो है सो, और इसीलिए कष्ट भोगते हैं।

चन्दू : (व्यंग्य से) यानी कि तो मुझे दफ़्तर, आई मीन ऑफिस छोड़कर आँखें मूँदकर पूजा करनी होगी?

पंडितजी : मैं किस दिन के लिए हूँ, जो है सो! कलिकाल में अप्रत्यक्ष पूजन का भी विधान है। आपके लिए मैं जप-तप करूँगा जो है सो। दुर्गामाता का पाठ, भूतनाथ का पाठ, बजरंगबली का पाठ।

सावित्री : आपकी बड़ी कृपा होगी, पंडितजी! किसी तरह ग्रहों का कोप शान्त होना चाहिए।

पंडितजी : एक महीने तक पाठ करूँगा, जो है सो। हाँ, अगर यहाँ पाठ कराएँगी तो खर्च अधिक पड़ेगा।

चन्दू : यानी कि खर्च···!

पंडितजी : बिना खर्च के जप-तप कैसे होगा, जो है सो?

सावित्री : आप इनकी बातों पर ध्यान न दीजिए। मुझे बताइए, कितना खर्च होगा?

पंडितजी : अपने घर पर पाठ करने के पचास रुपए, जो है सो, और जिजमान के घर पाठ करने के एक सौ एक।

सावित्री : मैं एक सौ एक रुपए दूँगी।

पंडितजी : पूजन-सामग्री के लिए तीस रुपए ऊपर से, जो है सो और हाँ, यदि चाहती हैं कि पूजा-पाठ का फल पूर्णरूप से मिले, जो है सो, तो मुझे अपने घर पर ही पाठ करने दीजिए क्योंकि वैसी सुविधाएँ और पवित्रता यहाँ नहीं है, जो है सो।

सावित्री : ठीक है। आप अपने घर पर ही पाठ करें, पडितजी!

चन्दू : यानी कि मैं कहता हूँ···

पंडितजी : मैं समझ गया, जो है सो। आपको भी कुछ विधान बताता हूँ। देखिए चन्दू बाबू, आपको बाएँ हाथ में काले घोड़े की नाल का बना छल्ला धारण करना चाहिए। इससे शनि

महाराज का कोप शान्त हो जाएगा।

सावित्री : लोहे के छल्ले से शनि महाराज प्रसन्न हो जाएंगे, पंडितजी ?

पंडितजी : अवश्य हो जाएंगे, जो है सो। परन्तु हां, थोड़ा-सा कष्ट और करना है।

चन्दू : यानी कि आज्ञा दीजिए !

पंडितजी : शनिवार को पीपल के नीचे सरसों के तेल का दीपक जलाना आवश्यक है, जो है सो।

चन्दू : यानी कि मुझे जलाना पड़ेगा ?

पंडितजी : जी हां ! और उसी दिन लोहे, तेल, काले तिल, वस्त्र आदि का दान करने से, जो है सो, शनि महाराज का कोप शान्त हो जाएगा।

सावित्री : ठीक है ; आज शनिवार है। यह सब मैं आज से ही शुरू करा दूंगी।

पंडितजी : मैं भी आज से ही पाठ प्रारम्भ कर दूंगा, जो है सो। यदि दक्षिणा···

सावित्री : हां···हां···अभी लीजिए। मैं रुपए लाती हूं···(अंदर जाती है।)

चन्दू : यानी कि और कोई विधान रह गया हो तो उसे भी बता दीजिए, पंडितजी !

पंडितजी : अभी तो इतना ही पर्याप्त है, जो है सो। आगे चलकर जैसी आवश्यकता होगी, बताता चलूंगा। आप तो घर के ही आदमी हैं, जो है सो।

चन्दू : (हंसते हुए) यानी कि घर क्या, सेण्ट-पर-सेण्ट घर कहिए पंडितजी !

पंडितजी : सो तो है ही, जो है सो, सो तो है ही।

[दोनों हंसते हैं। मंच पर अंधकार हो जाता है। पल भर बाद प्रकाश हो जाता है।]

चंदू : (खिन्न स्वर) यानी कि सुनती हो ? तुम्हारी छोटी बहन, माई मीन यंगर सिस्टर की शादी तय हो गई ।

सावित्री : (प्रसन्नता से) अच्छा···! क्या चिट्ठी आई है बाबूजी की ?

चन्दू : यानी कि जी हाँ । २९ तारीख को शादी है । डेढ़-दो सौ का नुस्खा है । यानी कि आने-जाने का खर्च, प्रेजेण्ट का खर्च···

सावित्री : तो आप चाहते हैं कि···

चन्दू : यानी कि तुम तो खाम्खा नाराज होती हो । मैं तो यह कह रहा था कि अगर शनि महाराज को प्लीज़ करने में दो-ढाई सौ खर्च न किए होते तो···

सावित्री : वह खर्च भी जरूरी था । जी है तो जहान है ।

चन्दू : यानी कि लेकिन फायदा तो कुछ नहीं हुआ । मैं कहता हूँ सब्बो डियर, तुम्हारे पंडितजी ने हमें ठग लिया ।

सावित्री : मेरे पंडितजी ? मिसेज वर्मा ने उनकी तारीफ की थी । इसीलिए बुला लिया था उन्हें ।

चन्दू : यानी कि तुम्हें उनसे कहना चाहिए था कि पंडितजी के पूजा-पाठ का कोई फल, माई मीन रिजल्ट नहीं निकला ।

सावित्री : आज ही कहा था । बहुत लज्जित थी बिचारी ! कह रही थीं आजकल एक पहुँचे हुए ज्योतिषीजी आए हुए हैं ।

चन्दू : ज्योतिषीजी···

सावित्री : हाँ, बड़े ज्ञानी हैं । वर्माजी ने अपनी कुण्डली दिखाई थी उन्हें ।

चन्दू यानी कि वर्माजी ने कुण्डली दिखाई थी···वण्डरफुल !

सावित्री : मैं भी दर्शन कर आई हूँ । उनसे यहाँ आने के लिए प्रार्थना भी कर आई हूँ ।

चन्दू : यानी कि तुमने उन्हें बुलाया है ।

सावित्री : हाँ, बड़ी मुश्किल से आने के लिए राजी हुए । आप जल्दी से हाथ-मुँह धो लीजिए ! आते ही होंगे ।

चन्दू : (असन्तुष्ट होकर) देखो सावित्री, यानी कि मैं तुमसे एक

हजार एक बार कह चुका हूँ···

सावित्री : बस, एक बार मेरी बात और मान लीजिए। प्लीज़ ! फिर कभी नहीं कहूँगी।

ज्योतिषी : (बाहर से) चन्दू बाबू ! चन्दू बाबू !

सावित्री : ज्योतिषीजी आ गए। (ऊँचे स्वर में) आ जाइए महाराज ! (ज्योतिषी का प्रवेश) पधारिए ! पधारिए ! हमारे अहोभाग्य महाराज !

ज्योतिषी : आयुष्मती हो ! सौभाग्यवती हो ! (बैठ जाते हैं।)

सावित्री : (चंदू से धीमे स्वर में) प्रणाम करो !

चन्दू : यानी कि मेरा भी प्रणाम स्वीकार करें !

ज्योतिषी . आपकी मनोकामना पूर्ण हो !

सावित्री : आपका आशीर्वाद चाहिए, महाराज ! वैसे आजकल इनकी ग्रहदशा बड़ी खराब चल रही है। एक पंडित को कुण्डली भी दिखाई थी।

ज्योतिषी : हूँ···क्या बताया पंडितजी ने ?

सावित्री : शनि की साढ़े साती बताई थी, महाराज ! पूजा-पाठ में काफी खर्च भी किया लेकिन कोई विशेष लाभ नहीं हुआ।

ज्योतिषी : कुण्डली का पूर्ण ज्ञान हरएक को नहीं होता।

सावित्री : अगर कृपा करके आप देख लें तो···

ज्योतिषी : मैं त्रिकालदर्शी हूँ ! कुण्डली की कोई आवश्यकता नहीं। ललाट की रेखाएँ देखकर ही सब कुछ बता सकता हूँ।

चन्दू : यानी कि वण्डरफुल।

सावित्री : बताइए, महाराज ! हमारे कष्ट कैसे दूर होंगे, ग्रहदशा कैसे सुधरेगी ?

ज्योतिषी : पहले यह पूछो कि कष्ट क्यों हैं ? किन-किन ग्रहों की वक्र दृष्टि है। सुनो, शनि के कोप के साथ-साथ बुध की महादशा भी है।

चंदू : बुध की महादशा !

ज्योतिषी : जी हाँ। और बुध की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा। मंगल है अग्निग्रह। कष्ट तो देगा ही ; शारीरिक भी और मानसिक भी।

सावित्री : हाँ, आप ठीक कह रहे हैं; दोनों व्याधियाँ कष्ट दे रही है।

ज्योतिषी : जरा इधर देखिए, चन्दू बाबू ! हाँ···ठीक है। बस (चौंककर) हैं ! शत्रु के घर से बृहस्पति घूर रहा है ! विनाश ! महाविनाश !

सावित्री : इस विनाश से रक्षा कीजिए, महाराज !

ज्योतिषी : करूँगा, अवश्य करूँगा। हूँ···बृहस्पति ही नहीं, शुक्र की स्थिति भी अमंगलकारी है। भयानक, अतीव भयानक ! मानसिक क्लेश, शारीरिक कष्ट !

सावित्री : कोई उपाय तो बताइए !

ज्योतिषी : चन्दू बाबू, आप बड़े जीवट के व्यक्ति हैं जो इतने ग्रहों का कोप झेल रहे हैं। और कोई होता तो···

चन्दू : यानी कि पागल हो जाता।

ज्योतिषी : मानसिक असन्तुलन का योग है। फिर भी चिन्ता की कोई बात नहीं ! ग्रह-नक्षत्र मेरे संकेत पर चलते हैं। मैं सब ठीक कर दूँगा।

सावित्री : बस, आपका ही सहारा है।

ज्योतिषी : मैं त्रिकालज्ञ हूँ त्रिकालज्ञ ! कलकत्ते के एक सटोरिए ने अपनी सेवा से मुझे प्रसन्न कर दिया और रातों-रात वह करोड़पति हो गया। बम्बई के बीसियों सेठ मेरी कृपा से सोने-चांदी से खेलते हैं। अनेक रजवाड़ों में···

चन्दू : यानी कि रजवाड़े तो कभी के समाप्त हो गए ?

ज्योतिषी : राजे-महाराजे तो हैं ! कहने का तात्पर्य यह कि सबकी भलाई करता हूँ···किन्तु बदले में अपने लिए कुछ नहीं चाहता।

सावित्री : धन्य है महाराज !

ज्योतिषी : मेरे गुरुजी कह गए थे···बच्चा ! लोभ-लालच से दूर रहना, तभी ज्योतिष-विद्या फलेगी । मुझे लोभ-लालच छू नहीं गया, इसीलिए मैं त्रिकालदर्शी हूँ ।

चन्दू : यानी कि प्रीजेंट, पास्ट एण्ड फ्यूचर ।

सावित्री : (धीमे स्वर में) चुप रहिए न ! कहीं ज्योतिषी जी नाराज हो गए तो···

ज्योतिषी : हाँ तो मैं ज्ञानी हूँ, गुनी हूँ, विद्या को बेचने वाला व्यवसायी नहीं । तुम्हारे कष्ट दूर होंगे ।

सावित्री : कैसे महाराज ?

ज्योतिषी : सोने की पांच अंगूठियां चाहिएँ । एक में पन्ना, दूसरी में पुखराज, तीसरी में नीलम, चौथी में मोती और पांचवीं में मूँगा जड़ा हो ।

चन्दू : यानी कि अंगूठियों से क्या होगा, महाराज ?

ज्योतिषी : आपके भाग्य के द्वार खुल जाएंगे ! सुख, समृद्धि और उन्नति के साथ-साथ आपके जीवन में समुद्र-यात्रा का भी योग है, परन्तु आपका भाग्य अभी ग्रहों के चक्कर में फँसा है । नगों के प्रभाव से यह चक्कर समाप्त हो जाएगा । परन्तु हाँ, नग सच्चे होने चाहिएँ, सच्चे !

सावित्री : कितना खर्च होगा पाँचों अंगूठियों में ?

ज्योतिषी : यह तो सर्राफ ही बताएगा । वैसे ६-७ सौ तो लगेंगे ही ।

चन्दू : यानी कि इतने रुपए हम लाएंगे कहाँ से ?

ज्योतिषी : ६-७ सौ खर्च करके लाखों कमाना नहीं चाहते ? सुनो, मैं आप लोगों के व्यवहार से प्रसन्न हूँ । मुझे अंगूठियां दो, मैं उनको मंत्रों से पवित्र कर दूंगा । तब उन्हें धारण करना । फिर देखना उनका प्रभाव !

सावित्री : ठीक है, महाराज ! मैं दो-एक दिन में अंगूठियां आपकी सेवा

मैं पहुँचा दूँगी। और कोई आज्ञा, महाराज?

ज्योतिषी : आज्ञा देने वाला मैं कौन हूँ? लेने-देने वाला तो कोई और है; मैं तो निमित्त मात्र हूँ। अच्छा, अब मैं चलूँगा।

सावित्री : ऐसे कैसे जाएँगे, महाराज! मुँह तो मीठा कर लीजिए!

ज्योतिषी : नहीं, मुझे मिष्ठान्न की तनिक भी इच्छा नहीं है। अब तो प्रस्थान की ही मुद्रा में हूँ। परन्तु हाँ, परसों तक अँगूठियाँ अवश्य ले आना!

सावित्री : अवश्य ले आऊँगी। प्रणाम, महाराज!

ज्योतिषी : सुखी रहो, सौभाग्यवती रहो! (प्रस्थान)

चंदू : यानी कि अँगूठियों के लिए हाँ तो कर दी, बट, आई मीन लेकिन ६-७ सौ रुपए कहाँ से आएँगे?

सावित्री : एक-आध जेवर बेच दूँगी, और क्या?

चंदू : यानी कि अँगूठियों के लिए जेवर बेचोगी?

सावित्री : तो क्या हुआ? अँगूठियाँ ज्योतिषी जी रख तो लेंगे नहीं! आखिर पहननी तो आपको ही हैं!

चंदू : ओह! सब्बो मैं कहता हूँ...

शर्मा : (द्वार से) मैं अन्दर आ सकता हूँ?

चंदू : यानी कि अन्दर तो आप आ ही गए हैं। कहिए, क्या सेवा करूँ आपकी?

शर्मा : (अन्दर आकर) चन्द सवाल पूछना चाहता हूँ।

चंदू : यानी कि चन्द क्यों, एक हजार एक पूछिए। लेकिन क्या मैं आपका परिचय, आई मीन...

शर्मा : श्योर-श्योर...! यह रहा मेरा कार्ड...देख लीजिए!

चंदू : (पढ़ता हुआ) चन्द्र मोहन शर्मा, सी० आई० डी० इन्सपेक्टर। यानी कि खैरियत तो है, इन्सपेक्टर साहब! पूछिए, आप क्या जानना चाहते हैं?

शर्मा : आप लोग मधुकर को कब से जानते हैं?

सावित्री : मधुकर कौन ?

चंदू : यानी कि हम किसी मधुकर-वधुकर को नहीं जानते।

शर्मा : झूठ बोलने की कोशिश न कीजिए। हमने अभी-अभी मधुकर को यहां से निकलते देखा है।

चंदू : यानी कि वह तो ज्योतिषी जी थे !

शर्मा : (हँसकर) ज्योतिषी जी ?

सावित्री : जी हां। अवश्य आपको धोखा हुआ है।

शर्मा : धोखा आप लोगों को हुआ है। वह ज्योतिषी नहीं, परले सिरे का ठग और जालिया है।

सावित्री, चंदू : (एक साथ) जालिया ?

शर्मा : जी हां। उसका असली नाम है मधुकर और काम है लोगों को ठगना। कभी ज्योतिषी बनता है, कभी सौदागर, कभी अफ़सर बनता है और कभी एजेण्ट।

सावित्री : हाय ! वह हमसे ६-७ सौ रुपए की अँगूठियां मांगता था।

शर्मा : आपने दी तो नहीं ?

चंदू : नहीं, यानी कि परसों देने की बात थी। कहता था, मैं मंत्र से पवित्र कर दूंगा, तब धारण करना। इससे ग्रहों का चक्कर समाप्त हो जाएगा।

शर्मा : शुक्र है कि आप बच गए।

सावित्री : इन्स्पेक्टर साहब, आप ऐसे आदमी को पकड़ते क्यों नहीं ?

शर्मा : यहां से निकलते ही वह पकड़ लिया गया है। हम समझते थे कि आप उसके परिचित होंगे लेकिन (हँसकर), आप तो उसके होने वाले शिकार निकले। भगवान को धन्यवाद दीजिए कि आप बाल-बाल बच गए।

चंदू : यानी कि यह भी ग्रहों का प्रभाव ही है कि हम उस धूर्त के चक्कर से बच गए। यानी कि धन्य है ग्रहों का चक्कर!

[यवनिका]

पहेली का चक्कर

[हास्य-एकांकी]

क्या आपको पहेली भरने का शौक है ? यदि है तो भी और यदि नहीं है तो भी, इस एकांकी को अवश्य पढ़ें ! पहेली का चक्कर आपको ऐसे चक्कर दिखाएगा कि आप हँसते-हँसते दोहरे हो जाएँगे ।

पात्र-परिचय

चन्दू	नाटक का नायक ।
सावित्री	चन्दू की पत्नी ।
हरी प्रकाश	चन्दू का साथी क्लर्क ।
रीता	चन्दू के ऑफिस की स्टेनो ।
	⊙
स्थान	चन्दू का घर और ऑफिस
	⊙
समय	सुबह, दोपहर, शाम

[चंदू अपनी बैठक में बड़ी तन्मयता से पहेली भर रहा है।]

चंदू : (रुक-रुककर पढ़ता हुआ और सोचता हुआ) लेखकों और कवियों को इसकी बहुत भूख होती है…हूँ…दो अक्षरों का शब्द होना चाहिए……। नाम…हाँ…यह ठीक है, नाम की भूख…लेकिन 'आ' की मात्रा तो संकेत में है नहीं; नहीं-नहीं…। नाम फिट नहीं बैठेगा। धन की भूख, मन की भूख। तन की भूख, यश की भूख…। यश की भूख ठीक है। (लिखता हुआ) यश। स्त्रियों के यह देखते ही बनते हैं। तीन अक्षरों का शब्द…। पहले में 'ए' की मात्रा और अंतिम दो अक्षर हैं…वर…। केवर, खेवर, चेवर, छेवर, जेवर…। तेवर। अहाहा! मार ली बाजी! बस जेवर या तेवर। स्त्रियों के जेवर देखते ही बनते हैं। स्त्रियों के तेवर देखते ही बनते हैं। (सहसा ऊँचे स्वर में) अरे सुनती हो, श्रीमती सावित्री देवी!

सावित्री : (अन्दर से) तुम मुझे बहरी समझते हो क्या?

चंदू : मैंने कहा, सुनने में तो तुम अच्छों-अच्छों के कान काटती हो। अभी तो यहाँ आओ जल्दी से!

सावित्री : (अन्दर से ही) चूल्हे पर दाल चढ़ी है।

चंदू : दाल जाए जहन्नुम मे। फ़ौरन आओ! पतिदेव की आज्ञा मानना पत्नी का परम पुनीत धर्म है। यस, कम ऑन एट वन्स।

सावित्री : (प्रवेश करके) क्या आज्ञा है, श्रीमान जी? सेविका प्रस्तुत है।

चंदू : देखो सावित्री, तुमसे एक हज़ार एक बार कह चुका हूँ कि मुझसे यह अटपटी भाषा न बोला करो। यस, नाउ सिट डाउन।

सावित्री : लीजिए, बैठ गई। (चंदू के पास बैठ जाती है।)

चंदू : ठीक है। हाँ देखो, तुम हमेशा वर्ग-पहेलियों को कोसती रहती हो। इस बार…

सावित्री : कोसूँ नही तो क्या करूँ? जब देखो तब उसी के पीछे दीवाने।

चंदू : दीवाने। यस, यू आर राइट। लेकिन (गाता हुआ) 'रंग लाएगी मेरी दीवानगी यह एक दिन', और वह दिन दूर नही, सावित्री! इस बार सेण्ट-पर-सेण्ट चान्सेस हैं। नो नो …आई एम सॉरी। अभी तो सिर्फ़ नाइन्टी नाइन परसेण्ट हैं, अगर तुम मदद कर दो…

सावित्री : मैं मदद कर दूँ? इस निगोड़ी वर्ग-पहेल में?

चंदू : सिर्फ़ एक संकेत बचा है। उसमें तुम्हीं मदद कर सकती हो क्योंकि उसका सम्बन्ध, आई मीन रिलेशन औरतों से है।

सावित्री : तुम्हारा रिलेशन जाए भाड़ में। मैं जाती हूँ। दाल जल रही है।

चंदू : नो नो, सावित्री नो। यू मस्ट हेल्प मी। तुम मेरी पत्नी हो और पति की आड़े समय में सहायता करना पत्नी का…

सावित्री : (वाक्य पूरा करती हुई उसी के लहजे में) परम पुनीत धर्म है।

चंदू : ऐग्ज़ैक्टली। तुम बेटर हाफ हो······ अर्द्धांगिनी हो···मेरे सुख-दुख की भागीदार।

सावित्री : अभी तक तो दुख ही पल्ले पड़े हैं।

चंदू : आई नो। बट वेरी सून खुशियों की बारात सजेगी। आई एम श्योर, इस बार फ़र्स्ट प्राइज़ ज़रूर मिलेगा।

सावित्री : हर बार तुम यही कहते हो।

चंदू : लेकिन हर वार ग्रह, आई मीन स्टार्स धोखा दे जाते हैं। बैड लक ! इस बार ऐसा नहीं होगा। बिलीव मी।

सावित्री : क्यों ?

चंदू : क्योंकि अब स्टार्स हमारे फ़ेवर में हैं। लार्ड शनि की तिरछी नज़र सीधी हो गई है ; लार्ड राहु का कोप शान्त हो गया है। लार्ड मंगल की दया भी···

सावित्री : (आश्चर्य से) तुम्हें यह सब कैसे मालूम ?

चंदू : ज्योतिष, माई डियर, ज्योतिष।

सावित्री : तुम ज्योतिष कब से जानने लगे ?

चंदू : मैं नहीं जानता तो क्या हुआ, ज्योतिषी तो हैं। मैंने कल एक ज्योतिषी को अपना हाथ दिखाया था। हाथ की लकीरें देखकर उसने मेरी लाइफ इस तरह पढ़नी शुरू कर दी गोया एक खुली हुई किताब हो।

सावित्री : अच्छा !

चंदू : यस माई डियर, यस। तुम क्या जानो ज्योतिष की माया ! उस ज्योतिषी ने तुम्हारे बारे में भी बताया।

सावित्री : (उत्सुकता से) क्या बताया उसने ?

चंदू : उसने कहा···बच्चा, तेरी पत्नी बड़ी पतिव्रता है। तू बहुत सौभाग्यशाली है जो साक्षात् लक्ष्मी तेरे घर में है। उसके भाग्य से ही तेरे भाग्य के द्वार खुलेंगे।

सावित्री : (प्रसन्नता को दबाकर) चलो, उतर आए झूठी चापलूसी पर।

चंदू : बिलीव मी, सावित्री ! मैं सेण्ट-पर-सेण्ट सच कह रहा हूँ। अब मेरा सितारा चमकने वाला है। साप्ताहिक भविष्यफल भी यही कहता है। बस, चटपट इस पहेली के लास्ट क्लू में मेरी हेल्प कर दो और···

सावित्री : क्या है संकेत ?

चंदू : बस, यह बता दो कि स्त्रियों के जेवर देखते ही बनते हैं या तेवर ! तुम तो स्त्री हो। यू मस्ट नो। मेरे खयाल में तो स्त्री की शोभा जेवर ही हैं।

सावित्री : (तुनककर) देखो, ऐसी बातें करके सवेरे-सवेरे मेरा जी न जलाओ। कभी एक भी जेवर बनवाकर दिया है मुझे कि यूँ ही···

चंदू : लो, तुम तो फिर नाराज हो गईं !

सावित्री : (क्रोध से) नाराजी की तो बात ही है। जो दो-चार जेवर मायके से मिले थे, उन्हें भी बेंचकर···

चंदू : (बीच में ही) माई गॉड ! गुस्से में तुम और भी सुन्दर लगती हो। तुम्हारे ये तेवर······(सहसा) हुर्र···! मिल गया···मिल गया···मिल गया···!

सावित्री : (चौंककर) क्या मिल गया ?

चंदू : पहेली का हल ! डियर सावित्री, थैंक यू···थैंक यू ! तुमने हल ही नहीं बताया, डिमान्स्ट्रेट भी कर दिया। स्त्रियों के तेवर देखते ही बनते हैं। अब इनाम अपना और भगवान कसम···दर्जनों जेवर तुम्हारे ! बस, जल्दी से दो रोटियाँ सेंक दो। दफ्तर का टाइम हो रहा है।

सावित्री : दाल तो अब तक जलकर खाक हो गई होगी।

चंदू : डोंट वरी ! आज बगैर दाल के ही चलेगा। और हाँ, पाँच रुपए भी दे देना। पहली को वापस कर दूँगा।

सावित्री : रुपयों का क्या करोगे ?

चंदू : लॉटरी के टिकट खरीदूँगा। स्टार्स बार-बार साथ नहीं देते। अब चन्दू का ज़माना बदलने वाला है।

सावित्री : मेरे पास रुपए नहीं हैं।

चंदू : गृहलक्ष्मी के पास रुपए न हों, यह मैं नहीं मान सकता। प्लीज़ हेल्प मी टु टेक एवरी चान्स ! उठो, तुम तो मेरी बेटर हाफ हो, माई मीन अर्धांगिनी। एक बार सावित्री अपने सत्यवान की रक्षा के लिए यमराज से लड़ी थी; क्या तुम पाँच रुपए देकर मेरे दुर्भाग्य का अन्त नहीं कर सकती ? उठो, गव्वो डियर !

[सावित्री उठती है। मंच पर अंधेरा हो जाता है। जब प्रकाश होता है तब चंदू के दफ्तर का दृश्य दिखाई पड़ता है। लंच का समय है, इसलिए ऑफिस में चंदू और उसका साथी हरी प्रकाश ही हैं।]

हरी प्रकाश : कहो यार चन्दू, आज बहुत खुश नज़र आ रहे हो ! कुछ उधार लिया पैसा देना था ?

चंदू : जिसका रोज़ देखना हूँ।

हरी प्रकाश : सावित्री भाभी का ?

चंदू : नो, नो, यू आर रांग मिस्टर मौन माइंड !

हरी प्रकाश : देखो तुम मेरा नाम फिर बिगाड़ रहे हो।

चंदू : बिगाड़ रहा हूँ ? वन्डरफुल ! यानी जवाब नहीं तुम्हारा। अरे यार के दुश्मन, मैं तो ट्रांसलेट कर रहा हूँ। हरी प्रकाश को अगर मैंने मौन माइंड कर दिया।

हरी प्रकाश : और अगर मैं चन्दू की जगह गुल्लू कहने लगूँ तो ?

चंदू : गुल्लू ?

हरी प्रकाश : हाँ, गुल्लू ! तुम कन्ने वाले और गुल्लू कहाने वाले चन्दू !

चंदू : वन्डरफुल ! यार, कभी-कभी तो तू भी दूर की कौड़ी लाता है। यहीं, अच्छा कहीं !

हरी प्रकाश : बहुत चहक रहा है आज। बता न, किस भाग्यवान का मुँह देखा था ?

चंदू : देख, मैं रोज सुबह उठकर सबसे पहले अपना ही चेहरा देखता हूँ। अपने पलंग के पास ही खास इसी परपज़ के लिए मैंने एक स्पेशल शीशा, आई मीन मिरर लगा रखा है।

हरी प्रकाश : लगा हाँकने दून की। यह क्यों नहीं कहता, आज रोज़ की तरह सुबह-सुबह भाभी जी की झिड़कियाँ सुनने को नहीं मिलीं। बस, इसीलिए खुश है।

चंदू : सावित्री मुझे झिड़केगी ? नो, यू आर अगेन रॉंग माई डियर फ्रेण्ड ! पत्नी को मैं ज्यादा मुँह नहीं लगाता। बच्चे, मेरा गुरुमन्त्र गाँठ में बाँध लो। अगर सुख और शान्ति से रहना चाहते हो तो बीवी को पैर की जूती से ज्यादा इम्पॉर्टेन्स मत दो।

हरी प्रकाश : आज तूने जरूर भाँग पी है !

चंदू : गलत बात बोलने की तेरी हैबिट पड़ गई है ! सुन, गोस्वामी तुलसी दास कह गए हैं कि स्त्रियाँ डाँट-फटकार की ही अधिकारिणी होती हैं।

रीता : (प्रवेश करके) किसे डाँट-फटकार पिलाई जा रही है, मिस्टर चन्दू ?

चंदू : ओह ! गुड नून, मिस रीता ! आइए, आइए ! आज आप लंच लेने नहीं गईं ?

रीता : टुडे आई एम एक्स्ट्रीमली बिज़ी।

हरी प्रकाश : कितने लेटर्स टाइप किए अभी तक ?

रीता : लेटर्स माई फुट ! मैं पर्सनल काम में बिज़ी हूँ।

चंदू : मैं आपकी कुछ मदद, आई मीन हेल्प कर सकता हूँ ? स्त्रियों की सहायता करना ही पुरुष का परम पुनीत धर्म

है, आई मीन सैकरेड ड्यूटी ।

हरी प्रकाश : लेकिन अभी तो तुम…

चंदू : (बीच में ही) बीच में नहीं बोलना चाहिए, हरी ! तुम आर्डीनेरी मैनर्स भी नहीं जानते ? मिस रीता, मैं हरी की तरफ़ से माफ़ी माँगता हूँ ।

रीता : दैट्स ऑलराइट ! हाँ, मैं आपके पास मदद के लिए ही आई हूँ ।

चंदू : आज्ञा दीजिए, आई मीन प्लीज ऑर्डर मी !

रीता : पोइट और रायटर्स आपके फ्रेंड हैं न ? उस दिन आप कह रहे थे…

हरी प्रकाश : कवियों और लेखकों से मिस्टर चंदू का वही रिश्ता है जो गधे का सींगों से होता है, मिस रीता !

चंदू : तुम फिर बीच में बोले । जानता हूँ तुम ऐसे नहीं मानोगे । यह लो दस नए पैसे और जाकर कैन्टीन में चाय पियो !

हरी प्रकाश : यार ! तुम बेकार नाराज हो रहे हो ? अच्छा बाबा, मैं कान पकड़ता हूँ । अब नहीं बोलूंगा ।

[हरी कान पकड़ता है, रीता हँसती है ।]

चंदू : दैट्स लाइक ए गुड ब्वॉय ! बस मिस रीता, इस शहर के बड़े-से-बड़े कवि और लेखक मेरे लंगोटिया यार, आई मीन फ़ास्ट फ्रेंड हैं । बताइए, आपको अपने ऊपर कहानी लिखवानी है या कविता ?

रीता : (हंसकर) नो नो, मिस्टर चंदू ! मैं उनकी आदतों-शौकों के बारे में जानना चाहती हूँ । बताइए, उन्हें धन की भूख ज्यादा होती है या यश की ?

चंदू : (चौंककर सतर्कता से) क्या मतलब है आपका ?

रीता : मैं एक पहेली भर रही हूँ । उसी में एक प्रश्न है !

चंदू : (हंसकर) आप भी इस फ़िज़ूल चक्कर में अपना टाइम

वेस्ट करती हैं ?

रीता : फिजूल चक्कर ? इट इज अ गुड हॉबी !

चंदू : नान्सेन्स ! मिस रीता, हम लोगों को प्रैक्टिकल होना चाहिए। यह पहेली, क्रॉसवर्ड बकवास है...दिमाग़ खराब होता है। यू मस्ट लीव दिस बैड हैबिट।

रीता : श्राइ वाण्ट योर हेल्प, नॉट एडवाइस। आप तो लेक्चर देने लगे ! मिस्टर हरी, कैन यू हेल्प मी ?

हरी प्रकाश : मुझे बोलने की इजाजत है, मिस्टर चन्दू ?

चंदू : ऑफ कोर्स ! जब मिस रीता सवाल कर रही हैं तो बोलना ही चाहिए। स्त्री के प्रश्न का उत्तर देना हर पुरुष का परम पुनीत धर्म है।

रीता : बस ! थैंक्स मिस्टरी हरी ?

हरी प्रकाश : वैसे तो दुनिया के हर इन्सान की सबसे बड़ी भूख धन की होती है ; लेकिन कवि, लेखक और कलाकार धन से ज्यादा इम्पॉर्टेन्स देते हैं यश को।

रीता : तो मैं यश भर दूँ ?

हरी प्रकाश : आँख बन्द करके भर दीजिए।

चंदू : दिस इज सेण्ट-पर-सेण्ट रॉंग; मैं ऐसे कवियों और लेखकों को नजदीक से जानता हूँ जो पैसा लेकर दूसरों के नाम से लिखते हैं। उन्हे यश और नाम नहीं, धन चाहिए। अगर आप पहेली भरना ही चाहती है मिस रीता, तो मैं आपको धन भरने की ही एडवाइस दूँगा।

रीता : थैंक्स फॉर दिस एडवाइस ; थैंक यू मिस्टर हरी !

[रीता नेपथ्य में चली जाती है।]

हरी प्रकाश : क्यो हजरत, कहाँ तो स्त्रियो को डाँट पिलाने का लेक्चर दे रहे थे और कहाँ रीता के आते ही गिरगिट की तरह रग बदल लिया !

चंदू : देख भाई, रीता बॉस के मुँह लगी है और मुझे अपनी नौकरी प्यारी है। अगर रीता के सामने स्त्रियों के बारे में अपनी सच्ची ओपिनियन रख दूँ तो दूसरे दिन ही इस आलीशान दफ़्तर की आलीशान इमारत के दरवाज़े अपने राम के लिए हमेशा के लिए बन्द, आई मीन क्लोज़्ड हो जाएँ।

हरी प्रकाश : बड़ा डरपोक है तू।

चंदू : डर की बात नहीं प्यारे, यही आज का तकाज़ा है।

हरी प्रकाश : क्या मतलब ?

चंदू : मतलब तेरी मोटी अक्ल में नहीं धँसेगा। तू बस फ़ाइलों में झक मार ! अपन राम तो चले कैंण्टीन में चाय पीने।

हरी प्रकाश : सुन यार, तेरे पास दो रुपए होंगे ? पहली को दे दूँगा।

चंदू : क्यों ? किस पिक्चर का प्रीमियर वो देखना है, प्यारे ?

हरी प्रकाश : पिक्चर नहीं यार, वो कंचन पीछे पड़ा है न ! सोचता हूँ, इस बार लॉटरी का टिकट ले ही लूँ।

चंदू : लॉटरी-वॉटरी के चक्कर से दूर रह ! देखता नहीं, अपने दफ़्तर के सैकड़ों बाबू हर बार टिकट खरीदते हैं; सोचते हैं, इस बार इनाम ज़रूर मिलेगा। कभी मिला किसी को ?··· बोल !

हरी प्रकाश : मैं खुद इस चक्कर से दूर रहता हूँ यार, मगर इस बार एक ज्योतिषी ने बताया है···

चंदू : ज्योतिषी ने ?

हरी प्रकाश : हाँ, यार ! उसने मेरे मस्तक की रेखाएँ देखकर ही बता दिया कि मुझे बहुत बड़ी रकम मिलने वाली है।

चंदू : अब तू गया काम से। भैया, इन चक्करों में न पड़ो ! जो नपी-तुली तनख्वाह मिलती है, उसी पर सन्तोष करो—मेरी तरह ! तू मेरी खुशी का राज़ जानना चाहता था न !

तो सुन, मैं कभी इन चक्करों मे नहीं फँसता ! मेहनत की कमाई पर यक़ीन करता हूँ और देख, कितना मस्त रहता हूँ !

[नेपथ्य में जोर से मेज़ की घंटी बजती है ।]

हरी प्रकाश : बड़े बाबू की घंटी बता रही है कि आज किसी की ख़ैर नहीं ।

चंदू : मैं किसी की परवाह नही करता । अगर मुझसे कुछ कहा तो वो जवाब दूंगा, वो जवाब दूंगा···

हरी प्रकाश : (नेपथ्य की ओर देखकर) जवाब सोच रख, यार ! चपरासी इधर ही आ रहा है !

[मंच पर पुनः अंधकार हो जाता है । प्रकाश होने पर चंदू के घर का दृश्य दिखाई पड़ता है ।]

चंदू : (क्रोध से) मैं तो तुमसे तंग आ गया हूँ, सावित्री ! अभी तक चाय नहीं बनी ? हाऊ डिस्गस्टिंग !

सावित्री : क्या हो गया है तुम्हे ? घर से तो अच्छे-खासे गए थे । क्या दफ्तर मे···

चंदू : दफ़्तर की बातो में दखल देने का तुम्हे कोई राइट नहीं । मैं तुम्हारा हस्बैण्ड हूँ और हर वाइफ की यह ड्यूटी है कि जब दफ़्तर से उसका हस्बैण्ड लौटकर घर आए तो उसके लिए गरमागरम चाय तैयार रखे । मगर तुम हो ···आई मीन···तुम्हें ज़रा भी शऊर नहीं ।

सावित्री : (हँसकर) तबीयत तो ठीक है तुम्हारी ?

चंदू : तबीयत ठीक कैसे रह सकती है, जब बड़े बाबू का बच्चा बेकसूर, आई मीन विदाउट एनी फ़ाल्ट डाँट का कड़वा मिक्स्चर पिला दे !

सावित्री : ओह, तो यह बात है ! लेकिन बड़े बाबू को पागल कुत्ते ने काटा था क्या जो बेकसूर डाँट दिया ? ज़रूर कोई

गलती…

चंदू : बड़े बाबू को छोटे साहब ने डाँटा था, छोटे साहब को बड़े साहब ने झिड़का था।

सावित्री : और बड़े साहब को?

चंदू : बड़े साहब को उनकी श्रीमती जी ने लताड़ा होगा। आई मीन दिस इज लाइक अ चेन…

सावित्री : और तुम मुझे डाँट रहे हो? क्या दफ्तर में कोई और नहीं मिला तुम्हें?

चंदू : मेरे सेक्शन का चपरासी छुट्टी पर था, नहीं तो उसकी वो खबर लेता, वो खबर लेता कि…

सावित्री : अच्छा! तो मैं चपरासी की जगह पर हूँ! (रुद्ध कंठ से) सवेरे जब अपना मतलब था, तब कैसी मीठी-मीठी बातें कर रहे थे और अब ऐसे बोल रहे हैं जैसे मैं घर की बाँदी होऊँ। अगर यही इज्जत है मेरी तो भेज दो मुझे मायके! इस घर में रहकर…

चंदू : (बीच में ही) यह लो…मायके जाने को कौन कहता है? आई मीन, मेरा मतलब तो…

सावित्री : मतलब मैं जानती हूँ। मुझे नहीं रहना है यहाँ! मैं अभी भैया को चिट्ठी लिखती हूँ कि आकर मुझे ले जाएँ।

चंदू : अरे रे रे! ऐसा गजब न करना! तुम्हारे बगैर मेरा काम कैसे चलेगा! आई मीन…

सावित्री : रोज तुम दफ्तर में डाँट सुनोगे और यहाँ आकर सारा गुस्सा मुझ पर उतारोगे। मैं यह सहन नहीं कर सकती। मैं अभी चिट्ठी लिखती हूँ।

चंदू : अरे रे रे! सुनो तो! मैं अब तुमसे कुछ नहीं कहा करूँगा। दफ्तर की डाँट दफ्तर में ही छोड़ आया करूँगा। बिलीव मी, गस्सो! आई प्रामिस!

सावित्री : और अगर घर-बाहर का चक्कर फिर एक हो गया, तो ?

चंदू : नहीं होगा…कभी नहीं होगा। मैं घर और बाहर को समानान्तर रेखाएँ, आई मीन पैरेलल लाइन्स बना दूंगा जो कभी मिल ही नहीं सकतीं। अब तो खुश हो ?

सावित्री : तुम्हारी बात का क्या ठीक !

चंदू : यू डोंट बिलीव मी ? तुम्हें मेरी बात पर यकीन नहीं ? देखो सब्बो, तुम चाहे मुझे सौ गालियाँ दे लो लेकिन ऐसी बात न कहो !

सावित्री : वादा भूलोगे तो नहीं ?

चंदू : नेवर माई डियर, नेवर। मैं अपनी पर्सनालिटी के दो टुकड़े कर दूंगा—एक घर के लिए, दूसरा बाहर के लिए। उन दोनों को कभी नहीं मिलने दूंगा, आई मीन नेवर नेवर नेवर।

सावित्री : नो नो नो…। इतने से काम नहीं चलेगा। तुम्हें मेरी हर बात माननी होगी।

चंदू : मानूंगा बाबा मानूंगा। आज से घर में मेरी बॉस तुम और दफ्तर में बड़े बाबू। अपने बिचारे रह गए चन्दू के चन्दू…

[यवनिका]

ज़िन्दा अजायबघर

[चरित्र-प्रधान एकांकी]

ज़िन्दा अजायबघर में आपने विचित्र-विचित्र जीव देखे होंगे। लेकिन क्या आपने बुद्धिमान जानवर (मनुष्य) की विचित्रताओं की ओर भी कभी ध्यान दिया है?

पात्र-परिचय

डाक्टर वयस्या ४० वर्ष।
वकील वयस्या ३५ वर्ष।
प्रोफ़ेसर वयस्या ३५ वर्ष।
सेठ वयस्या ५० वर्ष।
नेता वयस्या ४५ वर्ष।
छात्रा वयस्या २० वर्ष।

⊙

स्थान एक बड़े रेलवे-स्टेशन का फर्स्ट-क्लास वेटिंग रूम

⊙

समय रात के दस बजे

[सामने की दीवार पर बड़ी खिड़की, बाईं ओर बाहर से आने के लिए द्वार और बाईं ओर का द्वार बाथरूम में जाने के लिए। दीवारों पर कुछ नक्शे और चार्ट। फ़र्श पर एक सुन्दर मेज, कुछ आराम-कुर्सियाँ। कोनों में यात्रियों का सामान। पृष्ठभूमि से रह-रहकर ट्रेनों के आने-जाने की ध्वनियाँ।

पर्दा उठता है। डाक्टर आराम कुर्सी पर लेटा हुआ पाइप पी रहा है; वकील एक चार्ट को ध्यान से देख रहा है और छात्रा टहलती हुई कोई पुस्तक पढ़ रही है।]

वकील : (मुड़कर डाक्टर से) अगर आप स्मोकिंग बन्द कर दें तो बड़ी कृपा हो। (खाँसता है।)

डाक्टर : स्मोकिंग बन्द कर दूँ? लेकिन क्यों?

वकील : मुझे धुएँ से नफ़रत है।

डाक्टर : मुझे धुएँ से मुहब्बत है।

वकील : (डाक्टर की ओर बढ़कर) देखिए मिस्टर, मैं वकील हूँ और कानूनी दृष्टि से…

डाक्टर : (बीच में ही उठकर) और मैं डाक्टर हूँ। मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि आप बीमार हैं। धुएँ से नफ़रत होना खतर-नाक सिम्टम है।

छात्रा : (परेशान होकर) प्लीज ! शोर न कीजिए ! आप लोग देखते नही, मैं ड्रामा पढ़ रही हूँ ?

वकील : ड्रामा ? यू मीन···

छात्रा : जी हां, ड्रामा। (हिज्जे करती हुई) डी आर ए एम ए ड्रामा। मैं बम्बई जा रही हूँ···इण्टरव्यू देने। प्लीज डोण्ट डिस्टर्ब मी !

[फिर किताब पढ़ने लगती है।]

डाक्टर : देखिए श्रीमती जी···

छात्रा : (मुड़कर) मैं श्रीमती नही, कुमारी हूँ।

डाक्टर : आई एम सॉरी। देखिए कुमारी जी, बगल मे ही लेडीज वेटिंग रूम है। अगर आप वहाँ···

छात्रा : लेडीज वेटिंग रूम में शांति मिल सकती है भला ? वहाँ तीन-चार औरतें जोर-जोर से बातें कर रही हैं···घर-गृहस्थी के बारे मे, बाल-बच्चों के बारे मे, अपने-अपने पतियो के बारे में। दो मिनट में ही बोर होकर इधर आ गई। सोचा था, जेण्ट्स वेटिंग रूम मे जेण्टिलमेन होगे लेकिन यहाँ भी···

वकील : (बिगड़कर) आप हमारा अपमान कर रही हैं, कुमारी जी ! क्या हम शरीफ आदमी नही हैं ?

सेठ : (नेपथ्य से) शरीफ़ आदमी के माथे पर टीका नही लगा होता, भगवान की दया से। जा, भाग जा। और पैसे नहीं मिलेंगे।

[वकील, डाक्टर और छात्रा की दृष्टि द्वार की ओर उठती है। बाहर से सेठ का हाँफते-हाँफते प्रवेश।]

सेठ : (आराम कुर्सी पर बैठकर) ट्रेन को आज ही लेट होना था, भगवान की दया से।

डाक्टर : आप बुरी तरह हाँफ रहे हैं, सेठ जी ! खैरियत तो है ?

सेठ : क्या हांफने पर भी कन्ट्रोल है, भगवान की दया से ?

[सब हँसते हैं। छात्रा फिर टहलने लगती है।]

डाक्टर : जी नहीं ! मैं डाक्टर हूँ, इसलिए पूछा ।

सेठ : डाक्टर को हर कोई मरीज दिखाई देता है, भगवान की दया से । (छात्रा से) ऍ···! क्या आपको भी कोई मर्ज है··· मेरा मतलब है टहलने का ?

वकील : यह कुमारी जी इण्टरव्यू देने बम्बई जा रही हैं ।

डाक्टर : और इसीलिए ड्रामा पढ़ रही हैं ।

सेठ : किस बात का इण्टरव्यू है, भगवान की दया से ?

छात्रा : मैं फिल्म की हीरोइन बनने जा रही हूँ ।

वकील : हीरोइन ?

सेठ : यानी कि सचमुच की हीरोइन, भगवान की दया से ?

छात्रा : जी हाँ ! साल-दो-साल में आप लोग मेरा चेहरा सुनहरे पर्दे पर देखेंगे । देश के कोने-कोने में मेरे नाम की धूम मच जाएगी । ओह ! आई एम सो एक्साइटेड !

डाक्टर : कहें तो नर्व्स को मूद करने के लिए कोई दवा दे दूँ ?

छात्रा : जी नहीं ! धन्यवाद ? मैं अपना एक्साइटमेंट कम करना नहीं चाहती ।

सेठ : आप बम्बई जा रही हैं, भगवान की दया से ?

छात्रा : जी हाँ ।

वकील : माता-पिता से आज्ञा लेकर ? देखिए मैं वकील हूँ और कानूनी दृष्टि से···

छात्रा : (बीच में ही) अपना कानून अपने पास रहने दीजिए, मिस्टर ! मैं बालिग हूँ और अपनी मर्जी से कहीं भी जा सकती हूँ ।

सेठ : क्या बात कही है, भगवान की दया से ! वैसे मुझे भी बम्बई जाना है । जनाने वेटिंगरूम में घर वाली है, भगवान की दया से ।

प्रोफेसर : (प्रवेश करके) भगवान की दया तभी होगी जब हम उसके बनाए हुए जीवों पर दया करें ।

वकील : आप···?

प्रोफेसर : मैं प्रोफेसर हूँ ; एक कॉलिज में दर्शनशास्त्र पढ़ाता हूँ।

सेठ : यह कौन-सा शास्तर है, भगवान की दया से ? क्या आप भगवान के दर्शन करा देते हैं ?

प्रोफेसर : जी हाँ !

सेठ : (उठकर) धन्य भाग्य हमारे ! हमें भी दर्शन करा दें, भगवान की दया से ! मुंह-माँगी फीस दूंगा।

प्रोफेसर : जीवमात्र में भगवान के दर्शन कीजिए, सेठ जी !

सेठ : (बैठकर) धत्तेरे की ! यह तो हमारा पण्डित भी कहता है, भगवान की दया से।

प्रोफेसर : मगर आपका परमेश्वर तो पैसा है पैसा।
[प्रोफेसर खुलकर हंसता है। सब लोग उसकी ओर देखते हैं।]

डाक्टर : क्षमा कीजिएगा, मैं डाक्टर हूँ ! लगता है आपको मेरी सेवा की जरूरत है।

प्रोफेसर : क्या मतलब ? मैं मरीज नहीं हूँ।

डाक्टर : आप भूलते हैं, प्रोफेसर साहब ! इस दुनिया में हर आदमी मरीज है। यहाँ कोई भी स्वस्थ नहीं। कोई तन का रोगी, कोई मन का रोगी और कोई धन का रोगी।

प्रोफेसर : आदमी आप समझदार हैं। लेकिन आपके पास किसी भी रोग का इलाज नहीं है, डाक्टर !

छात्रा : कृपा करके आप लोग शान्त रहें। मुझे इंटरव्यू की तैयारी करने दें।

प्रोफेसर : इंटरव्यू ?

वकील : यह देवी जी फ़िल्मी हीरोइन बनने बम्बई जा रही हैं।

प्रोफेसर : हूँ···! आप पढ़ती हैं ?

छात्रा : जी हाँ !

प्रोफेसर : मेरी सहानुभूति आपके साथ है ! (जेब से अपना कार्ड निकालकर देता है) इसे रख लीजिए ! इस पर मेरा नाम और पता लिखा है ।

छात्रा : इसका क्या करूँगी मैं ?

प्रोफेसर : जब बम्बई से वापस आने के लिए पैसे न रहें, तो मुझे इस पते पर लिखना । रुपए भेज दूँगा ।

[प्रोफेसर फिर हँसता है ।]

सेठ : इतनी जोर से न हँसिए । मेरा दिल कमजोर है, भगवान की दया से ; धड़कने लगता है ।

डाक्टर : हाई ब्लड प्रेशर ! तभी आप हाँफ रहे थे ।

सेठ : हाँफ तो सीढ़ियाँ चढ़ने से रहा था, भगवान की दया से !

वकील : आप सीढ़ियाँ चढ़कर आए थे ? लिफ्ट...

सेठ : (बीच में ही) हमारे पण्डित ने बताया था कि ऐसी चीज से दूर रहना जो अधर में लटकती हो । इसीलिए लिफ्ट-विफ्ट से दूर रहता हूँ, भगवान की दया से । कभी हवाई जहाज से भी यात्रा नही करता ! (हँसकर) वैसे भगवान का दिया सब कुछ है, भगवान की दया से ।

डाक्टर : आप भी खूब हैं, सेठ जी !

सेठ : सब आपकी दया है, भगवान की दया से । एक बार कलकत्ते जाना था । स्टेशन से लौट आया, क्योंकि ट्रेन का नम्बर था थर्टीन डाउन ! तेरह का अङ्क अशुभ है, भगवान की दया से ।

प्रोफेसर : आप अन्धविश्वासी है ।

छात्रा : आप लोग चुप रहेंगे या नहीं ? मुझे डाइलॉग याद करने हैं।

वकील : कानूनी दृष्टि से आप हमें बोलने से नही रोक सकतीं, कुमारी जी !

प्रोफेसर : आपको बोलने से कैसे रोका जा सकता है, वकील साहब ?

आप बोलने की ही रोटी खाते हैं।

वकील : और आप नहीं खाते क्या ? मैं अदालत में बोलता हूँ और आप क्लास-रूम में।

प्रोफेसर : मैं सच बोलता हूँ, आप झूठ बोलते हैं।

वकील : मैं आप पर मानहानि का दावा करूँगा। आप लोग गवाह हैं।

सेठ : हमें तो गवाही से दूर रखो, भगवान की दया से ! आज तक अदालत का मुँह नहीं देखा। अब इस बुढ़ापे में...

डाक्टर : आप अपने को बूढ़ा समझते हैं ? यह तो बहुत बुरा लक्षण है। ठहरिये, मैं आपको अभी एक स्पेशल टॉनिक देता हूँ।

छात्रा : आप लोग ऐसे नहीं मानेंगे ! मैं अभी टिकट चेकर को बुलाती हूँ।

सेठ : डाक्टर साहब इन्हें कोई ऐसी दवा दो जिससे इनका चढ़ा हुआ पारा नीचे उतर आए, भगवान की दया से।

[सब लोग हँसते हैं। छात्रा क्षुब्ध हो जाती है। तभी बाहर से नेता का प्रवेश]

नेता : कदाचित् आप लोग नहीं जानते कि हँसने से शक्ति का ह्रास होता है। (सबकी हँसी रुक जाती है) आप लोग अपनी शक्ति क्यों व्यर्थ नष्ट करते हैं ?

डाक्टर : जनाब, मैं डाक्टर हूँ और पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि हँसने से शक्ति घटती नहीं, बढ़ती है।

नेता : जी नहीं ! हँसने से शक्ति का ह्रास होता है। इस शक्ति को आप लोग देश के निर्माण-कार्य में लगाइये।

वकील : मैं आपसे एक प्रश्न पूछ सकता हूँ ?

नेता : अवश्य ! मेरा कार्य ही प्रश्नों का उत्तर देना है।

वकील : आप इतने कमजोर और दुबले क्यों हैं ?

छात्रा : शहर के अन्देशे से।

[सब हँसते हैं।]

नेता : मेरा परिहास मत करो ! मैं वास्तव में इसीलिए दुर्बल हूँ कि मुझे देश के भविष्य की चिन्ता है। (भाषण की शैली में) आज हमारे सामने अनेक ऐसी राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएँ हैं जिनका समाधान…क्षमा करें। भाइयो और बहनो !

वकील : यहाँ तो एक ही बहन है।

सेठ : बहन नहीं, बेटी, भगवान की दया से।

[सब हँसते हैं।]

नेता : आप लोग कृपया शान्त रहें। हाँ, तो मुझे यह निवेदन करना है कि हम समस्त समस्याओं का समाधान तभी कर सकते हैं, जब हम…जब हम… (जैसे रटा हुआ भाषण भूल गया हो) हम समस्त समस्याओं का समाधान तभी कर सकते हैं, जब हम…जब हम… (सिर खुजलाने लगता है।)

छात्रा : जब हम सिर खुजलाने लगें।

[सब फिर हँसते हैं।]

नेता : कृपया हँसकर अपनी शक्ति नष्ट न कीजिये !

डाक्टर : तो क्या रोएं ?

नेता : रोना कायरता है।

वकील : फिर क्या करें ?

प्रोफेसर: मशीन बन जाइये !

सेठ : (नेता से) आप कहाँ जाएँगे, भगवान की दया से ?

नेता : राँची।

डाक्टर : राँची जाना आपके लिए वैसे फ़ायदेमन्द होगा। पर देखिये, मैं डाक्टर हूँ और अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि अभी आपको राँची जाने की ज़रूरत नहीं है।

नेता : पागलखाने नहीं जा रहा हूँ, श्रीमान् जी ! वहाँ एक विशाल जनसभा का आयोजन है। मुझे उसमें भाषण देना है।

डाक्टर : वैसे, क्या मैं आपसे यह पूछ सकता हूँ कि आपको रात में नींद आती है या नहीं ?

नेता : जिसके समक्ष इतनी समस्याएँ हों, जटिल प्रश्न हों, उसे निद्रा कैसे आ सकती है ?

वकील : ओह ! अनिद्रा के भी रोगी हैं। लीजिये, डाक्टर साहब ! आपको एक मरीज़ तो मिला। (नेता से) देखिये महोदय, मैं वकील हूँ। कभी ज़रूरत पड़े तो याद कीजियेगा।

नेता : धन्यवाद। न मैं रोगी हूँ और…

डाक्टर : माफ कीजियेगा ! हम सब किसी-न-किसी मर्ज़ के मरीज़ हैं। वकील साहब, सेठ जी, प्रोफेसर साहब और यह कुमारी जी।

छाया : (चुनौती के स्वर में) जी ! मैं भी मरीज़ हूँ ?

डाक्टर : जी हाँ ! आपको वहम है कि आप एक सफल हीरोइन बन सकती हैं।

छाया : और आपको वहम है कि हम सब मरीज़ हैं।

डाक्टर : जी हाँ। हकीम लुकमान के मरीज़ !

प्रोफेसर: जी नहीं, हम सब जानवर हैं।

सेठ : यह आप क्या कहते हैं, भगवान की दया से ?

प्रोफेसर: (दर्शकों की ओर मुख करके) जिन्दा अजायबघर में आप लोगों ने विचित्र-विचित्र जीव देखे होंगे। आज इस जानवर को भी देखिये जिसका नाम है—मनुष्य ! इसके चेहरे पर अनगिन मुखौटे हैं। डाक्टर का, वकील का, सेठ का, नेता का, प्रोफेसर का, छाया का, चेहरा वह नहीं, जो आप देखते हैं। (पृष्ठभूमि से ट्रेन आने की ध्वनि आती है।) ट्रेन आ गई। हम जाते हैं। तमाशा खत्म हुआ। आप भी अपने-अपने घर जाइये और इस जिन्दा अजायबघर के बारे में बाल-बच्चों को बताइये !

[यवनिका]

साम्राज्य और सुहाग
[ऐतिहासिक एकांकी]

पिता की साम्राज्य-लिप्सा पर पुत्री ने अपनी ही बलि दे दी, क्योंकि वह असंख्य ललनाओं के सुहाग को युद्ध की भयंकर अग्नि में भस्म होते नहीं देख सकती थी।

पात्र-परिचय

प्रभावती	चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री।
रमा	वीरसेन की पुत्री; प्रभावती की सहेली।
चन्द्रगुप्त द्वितीय	गुप्त सम्राट्; चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य।
कुबेरनागा	चन्द्रगुप्त की पत्नी।
वीरसेन	सन्धि-विग्रहीक।
महिम भट्ट	राजगुरु तथा प्रकांड ज्योतिषी।

⊙

स्थान — पाटलीपुत्र में राज-प्रासाद का एक कक्ष

⊙

समय — प्रातःकाल

डाक्टर : वैसे, क्या मैं आपसे यह पूछ सकता हूँ कि आपको रात में नींद आती है या नहीं ?

नेता : जिसके समक्ष इतनी समस्याएँ हों, जटिल प्रश्न हों, उसे निद्रा कैसे आ सकती है ?

वकील . ओह ! अनिद्रा के भी रोगी हैं । लीजिये, डाक्टर साहब ! आपको एक मरीज तो मिला । (नेता से) देखिये महोदय, मैं वकील हूँ । कभी जरूरत पड़े तो याद कीजियेगा ।

नेता : धन्यवाद । न मैं रोगी हूँ और···

डाक्टर : माफ कीजियेगा ! हम सब किसी-न-किसी मर्ज के मरीज हैं । वकील साहब, सेठ जी, प्रोफेसर साहब और यह कुमारी जी ।

छात्रा : (चुनौती के स्वर में) जी ! मैं भी मरीज हूँ ?

डाक्टर : जी हाँ ! आपको वहम है कि आप एक सफल हीरोइन बन सकती हैं ।

छात्रा : और आपको वहम है कि हम सब मरीज हैं ।

डाक्टर : जी हाँ । हकीम लुकमान के मरीज !

प्रोफेसर: जी नहीं, हम सब जानवर हैं ।

सेठ : यह आप क्या कहते हैं, भगवान की दया से ?

प्रोफेसर: (दर्शकों की ओर मुख करके) जिन्दा अजायबघर में आप लोगों ने विचित्र-विचित्र जीव देखे होंगे । आज इस जानवर को भी देखिये जिसका नाम है—मनुष्य ! इसके चेहरे पर अनगिन मुखौटे हैं । डाक्टर का, वकील का, सेठ का, नेता का, प्रोफेसर का, छात्रा का, चेहरा वह नहीं, जो आप देखते हैं । (पृष्ठभूमि से ट्रेन आने की ध्वनि आती है ।) ट्रेन आ गई । हम जाते हैं । तमाशा खत्म हुआ । आप भी अपने-अपने घर जाइये और इस जिन्दा अजायबघर के बारे में बाल-बच्चों को बताइये !

[यवनिका]

साम्राज्य और सुहाग

[ऐतिहासिक एकांकी]

पिता की साम्राज्य-लिप्सा पर पुत्री ने अपनी ही बलि दे दी, क्योंकि वह असंख्य ललनाओं के सुहाग को युद्ध की भयंकर अग्नि में भस्म होते नहीं देख सकती थी।

पात्र-परिचय

प्रभावती	चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री।
रमा	वीरसेन की पुत्री; प्रभावती की सहेली।
चन्द्रगुप्त द्वितीय	गुप्त सम्राट्; चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य।
कुबेरनागा	चन्द्रगुप्त की पत्नी।
वीरसेन	सन्धि-विग्रहीक।
महिम भट्ट	राजगुरु तथा प्रकाण्ड ज्योतिषी।

⊙

स्थान — पाटलीपुत्र में राज-प्रासाद का एक कक्ष

⊙

समय — प्रातःकाल

[कक्ष आयताकार है। सामने की भीति पर चन्द्रगुप्त प्रथम तथा समुद्रगुप्त के विशाल भीति-चित्र बने हैं। दाहिनी ओर एक द्वार है जो प्रासाद की ओर खुलता है। बाईं ओर की खिड़की खुली है। द्वार और खिड़की पर सुनहले पर्दे पड़े हैं। खिड़की से होकर शीतल पवन के झकोरे आ रहे हैं। फ़र्श पर क़ीमती ग़लीचा बिछा है। सामने की भीति से सटी हुई एक बड़ी चौकी है जिस पर रेशमी गद्दा बिछा है। चौकी के पाए चाँदी के हैं और उन पर सोने का काम है। उसके समीप ही दो छोटी-छोटी चौकियाँ हैं जिन पर ज़री के काम की गद्दियाँ बिछी हैं। खिड़की के समीप खड़ी प्रभावती सोन की स्वर्णिम धारा देख रही है, वह युवा है, सुन्दर है। रमा का प्रवेश। वह भी युवा और सुन्दर है।]

रमा : (प्रभावती को पीछे से गुदगुदाकर) क्या सोच रही हो?

प्रभावती : (चौंककर) कुछ नहीं, रमा! प्रकृति के मनोरम सौन्दर्य को देख रही थी।

रमा : उसकी क्या आवश्यकता है? दर्पण देख लिया करो!

प्रभावती : (न समझने के ढंग से) उससे क्या होगा?

रमा : होगा क्या! तुम्हारे सौन्दर्य को ही चुराकर तो प्रकृति सुन्दर हो गई है। अपना रूप देखकर ही मग्न हो लिया करो!

प्रभावती : (लजाकर) तुम्हें तो सदव परिहास ही सूझता !यदि मैं सम्राट् होती तो तुम्हें अपना मंत्री बनाती।

रमा : तुम्हारे पिता ने भी तो मेरे पिता को मंत्री बनाया है, प्रभा !

प्रभावती : पिता जी ने उन्हें सन्धि-विग्रहीक बनाया है। उनका कार्य सन्धि और युद्ध कराना है; निर्दोष का रक्तपात कराना है। पर मैं तो तुम्हें परिहास-मंत्री बनाती। तुम्हारा कार्य रुलाना नहीं, हँसाना होता; संहार नहीं, निर्माण होता।

रमा : युद्ध और शान्ति के लिए तुम्हें कब से चिन्ता होने लगी ?

[प्रभावती निःश्वास छोड़कर मंदगति से आकर बड़ी चौकी पर बैठ जाती है। रमा छोटी चौकी पर बैठ जाती है।]

प्रभावती : साम्राज्य की लालसा मनुष्य को पागल कर देती है, रमा! मनुष्यों की हड्डियों पर बना साम्राज्य किस काम का !

रमा : साम्राज्य खड्ग की धार से बनता है, प्रभा ! जिसमें अपने साम्राज्य को बढ़ाने की तीव्र लालसा नहीं, वह न तो सम्राट् है और न उसका साम्राज्य ही रह सकता है।

प्रभावती : खड्ग से लोगों के तन को जीता जा सकता है, मन को नहीं। शस्त्र-बल से बना साम्राज्य किसी भी क्षण विद्रोह की भयंकर ज्वाला में भस्म हो सकता है।

रमा : अच्छा, यही सही। पर यह तो बताओ कि आज अचानक इस प्रसंग को उठाने का कारण क्या है ?

प्रभावती : (गंभीर वाणी में) पिताजी को बना-बनाया साम्राज्य मिला है। जितना है, वही यथेष्ट है। पर मैं देखती हूँ कि वे दिन-रात इसी चिन्ता में रहते हैं कि किस प्रकार साम्राज्य का विस्तार किया जाए। उनकी महत्वाकांक्षा ने उन्हें सम्राट भले ही बना दिया हो, पर मनुष्य नहीं। न तो उनके पास माता जी के लिए समय है और न मेरे लिए

ही अवकाश। रमा, तुम्हीं बताओ, यह कहाँ का न्याय है? क्या सम्राट् मनुष्य नहीं होता? क्या उसका पत्नी, पुत्र और पुत्री के प्रति कोई भी उत्तरदायित्व नहीं? क्या हम लोगों का उस पर कोई अधिकार नहीं?

[आवेश से उसका मुख लाल हो जाता है। रमा मौन रहती है।]

प्रभावती : (संयत होकर) अशोक भी तो सम्राट् थे। एक दिन उन्हें अपने कर्मों पर प्रायश्चित करना ही पड़ा। पर पिता जी को कौन समझाए कि सच्ची विजय शरीर की नहीं, हृदय की होती है।

रमा : (हँसकर) अब कही है मन की बात। हृदय-प्रदेश पर क्या किसी ने अधिकार कर लिया है?

प्रभावती : यह परिहास का समय नहीं है, रमा! पिता जी की युद्ध-लिप्सा बढ़ती ही जा रही है और उस अग्नि में घृत का कार्य कर रही हैं तुम्हारे पिता जी की कुटिल योजनाएँ।

रमा : मेरे पिता को इसीलिए वेतन मिलता है, प्रभा! वे जो कुछ करते हैं, साम्राज्य के हित के लिए, सम्राट् की भलाई के लिए।

प्रभावती : ठीक है। मैं स्वयं पिता जी से विनती करूँगी कि भविष्य में युद्ध न करें। जितना साम्राज्य है, उसी को···

[नेपथ्य से पदचाप आती है। प्रभावती और रमा चौंककर खड़ी हो जाती हैं। कक्ष में सम्राट् चन्द्रगुप्त का प्रवेश। उनके साथ सन्धि-विग्रहीक वीरसेन भी हैं। सम्राट् विचार-मग्न हैं।]

प्रभावती : प्रणाम पिता जी! मैं आपका कुछ समय···

चन्द्रगुप्त : फिर कभी। इस समय तो मैं एक गंभीर समस्या में उलझा हुआ हूँ। तुम लोग दूसरे कक्ष में जाओ!

[प्रभावती और रमा बाहर चली जाती हैं। सम्राट् चिन्तित मुद्रा में टहलते रहते हैं।]

वीरसेन : (विनम्र स्वर में) इस प्रकार चिन्ता से लाभ, सम्राट्?

चन्द्रगुप्त : (चौकी पर बैठते हुए) तुम कहते हो कि चिन्ता न करूँ! गुजरात तथा सौराष्ट्र के शक क्षत्रप उद्दण्ड होते जा रहे हैं। आए दिन वे हमारे प्रदेश में घुसकर उत्पात करते हैं और तुम······

वीरसेन : (बीच में ही) मैं जानता हूँ, सम्राट्! किन्तु इसके लिए चिन्ता की क्या आवश्यकता है! उन्हें दबाना तो अत्यन्त सरल है।

चन्द्रगुप्त : (गंभीर स्वर में) तुम भूलते हो, वीरसेन! उन्हे पराजित करना लोहे के चने चबाना है। उनका युद्ध-कौशल, उनका संगठन, उनका साहस···क्या करूँ, कुछ समझ में नही आता।

वीरसेन : आप चिन्ता न करें, सम्राट्! मैंने उपाय खोज लिया है। जिस स्थिति में हम आज घिरे हैं, उसमें तो उन्हें पराजित करना कठिन पहेली है। इस समय तो हम उनसे युद्ध करने का विचार भी नही कर सकते। यदि···

चन्द्रगुप्त : (व्यग्रता से) कहो, रुक क्यों गए?

वीरसेन : किन्तु यदि बरार के वाकाटकों की सहायता हमें प्राप्त हो जाए तो हम गुजरात और सौराष्ट्र के क्षत्रपों को ही क्या, समस्त आर्यावर्त को साम्राज्य मे मिला सकेंगे।

चन्द्रगुप्त : (कुछ क्षण सोचकर) कहते तो ठीक हो, वीरसेन, पर वाकाटक क्यों हमारी सहायता करने लगे? वे स्वतन्त्र शासक हैं। उनसे सहायता प्राप्त करने का एक ही उपाय है—युद्ध!

वीरसेन : युद्ध? नहीं, सम्राट्! उन्हें तो नीति से जीतना होगा। यदि अपराध क्षमा हो तो कुछ निवेदन करूँ!

चन्द्रगुप्त : कहो ! निःसंकोच कहो, वीरसेन !

वीरसेन : बरार के वाकाटकों की शक्ति तो आप जानते ही हैं। हमें जिस प्रकार भी हो, उन्हें अपना मित्र बनाना है। स्वर्गीय पृथ्वीसेन की मृत्यु के उपरान्त उनके प्रतापी पुत्र रुद्रसेन द्वितीय ने अपनी शक्ति को और भी अधिक बढ़ा लिया है। यदि रुद्रसेन के साथ······

चन्द्रगुप्त : (व्यग्र स्वर में) यदि रुद्रसेन के साथ···

वीरसेन : (गम्भीर स्वर में) अपनी राजकुमारी प्रभावती का विवाह हो जाय तो सब समस्याएँ स्वतः हल हो जाएँगी।

चन्द्रगुप्त : प्रभा का विवाह रुद्रसेन के साथ···! प्रभा-रुद्र, रुद्र-प्रभा ! (प्रसन्न होकर) वीरसेन ! बहुत ही सुन्दर उपाय है ! आश्चर्य है कि मेरा ध्यान अभी तक इस ओर क्यों नहीं गया।

वीरसेन : (विनीत स्वर में) आपने कभी इधर ध्यान ही नहीं दिया, सम्राट् ! रुद्रसेन को मैं जानता हूँ। उसका जन्म-पत्र भी मैंने मँगवा लिया है। वह इस सम्बन्ध के लिए प्रस्तुत भी है। गुप्त-वंश की कन्या पाकर वाकाटक अपने को कृतार्थ समझेंगे। बस आपकी स्वीकृति······

चन्द्रगुप्त : (चौकी से उठकर टहलते हुए) मुझे क्या आपत्ति हो सकती है ! मैं साधन में नहीं, साध्य में विश्वास करता हूँ, वीरसेन !

वीरसेन : (उठकर अपने वस्त्रों से जन्म-पत्र निकाल कर सम्राट् को देता हुआ) यह है जन्म-पत्र, सम्राट् ! मेरे विचार से जन्म-पत्र न मिलाना ही उचित है क्योंकि यदि ग्रह न मिले तो······

चन्द्रगुप्त : (बीच में ही दृढ़ स्वर में) तुम चिन्ता न करो, वीरसेन ! चाहे ग्रह मिलें या न मिलें, यह विवाह अवश्य—अवश्य होगा। मैं अभी राजगुरु को बुलवाता हूँ।

वीरसेन : मैं उन्हें अभी भेजता हूं, सम्राट्! हां, क्या मैं किसी विश्वस्त चर को रुद्रसेन के पास अभी भेज दूं?

चन्द्रगुप्त : अवश्य, वीरसेन! शुभ कार्य में विलम्ब कैसा!

[वीरसेन झुककर अभिवादन करता है और फिर चला जाता है।]

चन्द्रगुप्त : (टहलते हुए) रुद्र और प्रभा! प्रभा और रुद्र!

[कुबेरनागा का प्रवेश। वह सुन्दर है।]

चन्द्रगुप्त : आओ, प्रिये! मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहा था।

कुबेरनागा: (मुस्कराकर) मेरे अहोभाग्य, सम्राट्!

चन्द्रगुप्त : (हँसकर) व्यंग्य कर रही हो? कोई बात नहीं। आओ बैठो! मुझे तुमसे आवश्यक परामर्श करना है।

[दोनों बड़ी चौकी पर बैठ जाते हैं।]

कुबेरनागा: क्या आज मन्त्रियों का अकाल पड़ गया है, सम्राट्?

चन्द्रगुप्त : (हँसकर) बहुत रुष्ट हो मुझसे? इन दिनों मैं अधिक व्यस्त भी रहा। कुछ दिनों की और बात है। हाँ, प्रभा तो अब विवाह-योग्य हो गई है।

कुबेरनागा: मुझे आश्चर्य है कि सम्राट् को यह जानने का अवकाश मिल गया।

चन्द्रगुप्त : मैं सैनिक हूं। सैनिक अस्त्र-शस्त्र का प्रहार सह सकता है, पर व्यंग्य-बाणों का नहीं। मैंने प्रभा का विवाह वरार के वाकाटक राजा रुद्रसेन द्वितीय के साथ करने का निश्चय किया है।

कुबेरनागा: गुप्त-वंश की कन्या वाकाटकों के घर जायगी?

चन्द्रगुप्त : क्या हुआ! गुप्त-वंश में भी तो लिच्छवि, शक और कुषाणों की कन्याएँ आई हैं!

कुबेरनागा: तो क्या उन विवाहों की भाँति इस विवाह का भी राजनैतिक महत्व है? क्या मेरी प्रभा को महत्वाकांक्षा की वेदी पर

चढ़ाया जा रहा है ? क्या…क्या…

चन्द्रगुप्त : (हँसकर) आवेश में न आओ ! रुद्रसेन योग्य है, प्रतापी है, युवा है, सुन्दर है । फिर इसमें क्या आपत्ति है ?

कुबेरनागा : आपने प्रभा से भी पूछा है ?

चन्द्रगुप्त : उसकी क्या आवश्यकता है ? मैं उसका पिता हूँ । रुद्रसेन का जन्म-पत्र यह है । मैंने राजगुरु को बुलवाया है ।

कुबेरनागा : आप पुरुष हैं, इसलिए नारी के हृदय की गति नहीं जान सकते हैं । प्रभा से पूछ लेना ही उचित है ।

चन्द्रगुप्त : उससे पूछना व्यर्थ है । मेरा निश्चय अटल है ।

कुबेरनागा : तो मुझसे भी पूछने की क्या आवश्यकता थी ?

चन्द्रगुप्त : मैं तो तुम्हें केवल सूचना दे रहा हूँ ।

[महिम भट्ट का प्रवेश । उनकी अवस्था लगभग ७० वर्ष है ।]

चन्द्रगुप्त : प्रणाम गुरुवर ! पधारिये !

[चन्द्रगुप्त और कुबेरनागा खड़े हो जाते हैं । महिम भट्ट बड़ी चौकी पर बैठ जाते हैं । वे दोनों छोटी चौकियों पर स्थान ग्रहण करते हैं ।]

महिम भट्ट : कैसे स्मरण किया, चन्द्र !

चन्द्रगुप्त : प्रभा का जन्म-पत्र तो आपने देखा ही है । इस जन्म-पत्र को भी देखिये ! इसके ग्रह कैसे हैं ?

[चन्द्रगुप्त जन्म-पत्र बढ़ा देते हैं । महिम भट्ट उसे ध्यान से देखते हैं । कक्ष में पूर्ण निस्तब्धता रहती है । जन्म-पत्र देख कर महिम भट्ट के मुख पर विषाद की छाया आ जाती है ।]

कुबेरनागा : कैसे ग्रह हैं, गुरुवर ?

महिम भट्ट : (गम्भीर और मन्द स्वर में) किसका जन्म-पत्र है यह ?

कुबेरनागा : बरार के वाकाटक राजा रुद्रसेन का । सम्राट ने इसके साथ प्रभा का विवाह करने का निश्चय किया है ।

महिम भट्ट : इस निश्चय को बदलने में ही कल्याण है, चन्द्र !

चन्द्रगुप्त : (उत्सुकता से) कारण ?

महिम भट्ट : इनके ग्रह प्रभा के ग्रहों के प्रतिकूल हैं। इस विवाह का परिणाम शुभ नही होगा, चन्द्र !

चन्द्रगुप्त : (दृढ़ स्वर में) किन्तु यह विवाह तो अवश्य होगा। मैं रुद्रसेन के पास चर भेज चुका हूं।

महिम भट्ट : अपने निश्चय पर पुनर्विचार करो, चन्द्र !

चन्द्रगुप्त : नहीं; मैं अपना निश्चय नहीं बदल सकता। गुप्तवंश और वाकाटकों का सम्बन्ध अवश्य होगा।

कुबेरनागा : (चिन्तित स्वर में महिम भट्ट से) आप इस सम्बन्ध के पक्ष में क्यों नही है ? रुद्रसेन के ग्रह किसके लिए अशुभ है ?

महिम भट्ट : प्रभा के लिए। रुद्रसेन की आयु अल्प है।

कुबेरनागा : यह क्या कह रहे हैं आप ?

महिम भट्ट : सत्य कह रहा हूँ। यदि यह विवाह हुआ तो प्रभा दस वर्ष से अधिक सौभाग्य का सुख नहीं भोग सकती।

कुबेरनागा : सुना आपने ? अब क्या निश्चय है आपका, सम्राट् ?

चन्द्रगुप्त : (कुछ क्षण मौन रहकर गम्भीर स्वर में) रुद्रसेन और प्रभा का विवाह होना अत्यन्त आवश्यक है। (महिम भट्ट की ओर मुड़कर) आप जन्म-पत्र फिर से देखिए। कहीं भूल तो नही हो गई है ?

महिम भट्ट : (कुछ क्रुद्ध स्वर में) मुझ पर अविश्वास कर रहे हो, चन्द्र ? महिम भट्ट ने आज तक कभी भूल नही की। मैं तुम्हें फिर सावधान किये देता हूँ। इस सम्बन्ध का विचार त्याग दो, अन्यथा वही होगा जो मैं कह चुका हूँ।

[महिम भट्ट क्रुद्ध भाव से उठकर जन्म-पत्र चन्द्रगुप्त के हाथ में दे देते हैं और फिर तीव्रगति से बाहर चले जाते हैं।]

कुबेरनागा : इस विचार को त्याग दीजिए, सम्राट् ! महिम भट्ट की

गणना कभी अशुद्ध नहीं हुई है ।

चन्द्रगुप्त : (क्रुद्ध स्वर में) तुम चुप रहो ! मैं जो चाहता हूं, उसे प्राप्त करके रहता हूँ। मैं समस्त आर्यावर्त को अपनी पताका के नीचे देखना चाहता हूँ। इस ध्येय की प्राप्ति तभी हो सकती है, जब वाकाटक हमारी सहायता करें।

कुबेरनागा : उनकी सहायता प्राप्त करने के और भी उपाय हैं।

चन्द्रगुप्त : वाकाटक स्वाभिमानी हैं। या तो मैं उनके सामने सहायता के लिए झोली फैलाऊँ या फिर उन्हें युद्ध में पराजित करूँ, तभी युद्ध में सहायता मिल सकती है। क्या तुम चाहती हो कि गुप्त-सम्राट् उनके सामने घुटने टेककर याचना करे ? क्या तुम्हारी यह इच्छा है कि उनसे युद्ध करके असंख्य निर्दोषों का रक्तपात किया जाए ?

कुबेरनागा : नहीं; मैं यह नहीं चाहती। मेरी तो यही इच्छा है कि जितना भी प्रदेश आपके अधिकार में है, आप उसी पर संतोष करें।

चन्द्रगुप्त : सन्तोष का दूसरा नाम मृत्यु है। मैं जीवन चाहता हूँ।

कुबेरनागा : आपकी जो इच्छा हो, करें। पर यह कहाँ का न्याय है कि एक अबोध बच्ची का सौभाग्य ही दाँव पर लगा दें ?

चन्द्रगुप्त : राजनीति की इन गहन बातों को तुम क्या समझो !

कुबेरनागा : मैं क्यों न समझूँगी ! उसी कुटिल राजनीति का मैं स्वयं लक्ष्य बन चुकी हूँ। नाग-वंश से मैत्री स्थापित करने के लिए ही आपने मुझसे विवाह किया है। बहन ध्रुवदेवी का उदाहरण.........

चन्द्रगुप्त : (कठोर स्वर में) बस, कह चुकी जो कहना था। अब मौन रहो और मुझे सोचने दो !

कुबेरनागा : (गम्भीर और तीव्र स्वर में) आज तक मौन रही हूँ, सम्राट्, पर आज न रहूँगी ! मेरी आत्मा विद्रोह कर

रही है। आपकी साम्राज्य-लिप्सा पर मैं अपनी प्रिय पुत्री की बलि नहीं होने दूंगी।

[चन्द्रगुप्त उठकर टहलने लगते हैं। उनके मुख पर झुंझलाहट के चिन्ह हैं। कुबेरनागा भी उन्हीं के पीछे-पीछे टहलती है।]

कुबेरनागा : पहले आप पति और पिता हैं, बाद में सम्राट्। एक पति का कर्त्तव्य आप भूले रहे, मैंने कुछ न कहा। आज मैं आपको पिता के धर्म से न गिरने दूंगी चाहे······चाहे इसके लिए मुझे जीवन का ही दाँव क्यों न लगाना पड़े!

चन्द्रगुप्त : जिसकी खड्ग सहस्रों का रक्त पी चुकी हो, उसके लिए एक जीवन का क्या मूल्य है? जाओ, कक्ष में जाकर विश्राम करो!

कुबेरनागा : (विनीत स्वर) सम्राट्! मैं अपनी पुत्री के सौभाग्य की याचना करती हूँ। अपने निश्चय को बदल दीजिए! यदि आप वैवाहिक सम्बन्ध से ही वाकाटकों की मैत्री प्राप्त करना चाहते हैं तो उनकी कन्या ले आइए! आप रुद्रसेन की भगिनी से विवाह कर लीजिए, मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। पर···पर दया करके प्रभा के सुख से न खेलिए! उसे जीवित मृत्यु का दण्ड न दीजिए, वैधव्य की ज्वाला में न झोंकिए!

[कुबेरनागा का कंठ अवरुद्ध हो जाता है और आँखों से अश्रुधार बहने लगती है। चन्द्रगुप्त उसकी ओर देखते हैं; फिर मुँह घुमाकर खिड़की के बाहर देखने लगते हैं।]

चन्द्रगुप्त : (मुख खिड़की की ओर किए हुए) यदि रुद्रसेन की कोई अविवाहिता भगिनी होती तो मैं तुम्हारी बात अवश्य मान लेता। (घूमकर आगे बढ़ते हुए) पर···पर ऐसा नहीं है। मैं विवश हूँ; प्रभा का विवाह रुद्रसेन से करना ही होगा।

यही मेरा अन्तिम निर्णय है ।

[चन्द्रगुप्त विद्युत-वेग से बाहर चले जाते हैं । कुबेरनागा 'सम्राट्', 'सम्राट्' कहती रह जाती है । वहीं चौकी पर गिरकर वह सिसकने लगती है । नेपथ्य से करुण संगीत की ध्वनि आती है । तभी कक्ष में प्रभावती प्रवेश करती है । वह गम्भीर मुद्रा में है । अपनी माता के समीप बैठकर वह उसकी पीठ पर हाथ रखती है । कुबेरनागा उठकर फूट-फूट कर रोने लगती है और उसे हृदय से लगा लेती है ।]

प्रभावती : (गंभीर तथा मद स्वर में) क्यों रो रही हो, माँ ?

कुबेरनागा : (सिसकते हुए) बेटी, तेरे पिता···

प्रभावती : (बीच में ही) मैं सब जानती हूँ, माँ! मैं अपराधिनी हूँ । मैंने आप लोगों की बातें गुप्त रूप से सुनी हैं ।

कुबेरनागा : (कातर होकर) सब कुछ सुन कर भी तू मौन है ? तेरा हृदय विद्रोह नहीं करता ?

प्रभावती : (दृढ़ स्वर में) नहीं ! सम्राट् की इच्छा ही आदेश है । आप अभी जाकर उनसे कह दें कि मैं इस सम्बन्ध से सन्तुष्ट हूँ ।

कुबेरनागा : (तीव्रता से) पागल हो गई है क्या तू ? जानकर भी आग से खेल रही है ? जानती है भट्ट जी ने···

प्रभावती : जानती हूँ । यही न, कि मैं दस वर्ष से अधिक सौभाग्य-सुख नहीं भोग सकती ? क्या हुआ ! सम्राट् की इच्छा-पूर्ति और साम्राज्य के हित के लिए···

कुबेरनागा : (बीच में खड़ी होकर) तू अवश्य पागल हो गई है ।

प्रभावती : (खड़ी होकर) पागल नहीं हूँ, माँ ! सम्राट् वाकाटकों की सहायता प्राप्त करने के लिए व्याकुल है । यदि यह सम्बन्ध न हुआ तो···तो सम्राट् युद्ध का मार्ग अपनाएँगे ।

कुबेरनागा : अपनाने दे । तुझे क्या !

प्रभावती : (हँसकर) मैं युद्ध नहीं चाहती। माँ, आप मोह में पड़ी हैं। सोचिए, क्या आप केवल मेरी ही माँ हैं? क्या साम्राज्य की जनता आपकी सन्तान नहीं है? यदि युद्ध हुआ तो असंख्य ललनाओं का सुहाग लुट जाएगा, माताओं के लाल, बहनों के भाई छिन जाएँगे।

कुबेरनागा : (सिसकते हुए) बेटी···

प्रभावती : माँ, क्या आप चाहती हैं कि युद्ध की अग्नि में इतनी महान् आहुति दी जाए? क्या आप सोन के पावन जल को अपनी ही सन्तानों के रक्त से लाल देखना चाहती हैं? क्या आप चाहती हैं कि इतिहासकार यह लिखें कि एक मोहान्ध माता ने अपनी पुत्री के कारण असंख्य नारियों के सुहाग को धूल में मिला दिया? क्या आप···

कुबेरनागा : (कानों में उँगलियाँ डालते हुए) बस, बेटी, बस! अब मैं और अधिक नहीं सुन सकती।

प्रभावती : (समीप आकर) तो आँसू पोंछ डालिए और अपनी प्रभा को आशीर्वाद दीजिए माँ, कि वह कर्तव्य-पथ पर अचल रहे, पति-चरणों में उसका अनन्त राग रहे।

कुबेरनागा : (झपटकर प्रभावती को हृदय से लगाते हुए) बेटी! मेरी प्यारी बेटी!

[प्रभावती का मुख किसी स्वर्गीय ज्योति से दीप्त हो उठता है। कुबेरनागा उसे आलिंगन में भरे रहती है। यवनिका गिरती है।]

आकाश-पाताल

[ऐतिहासिक एकांकी]

गोरी ने छल से उच्च का दुर्ग अवश्य जीत लिया पर क्या वह बल से राजकुमारी शालिनी का हृदय जीत सका ? गोरी ने शायद राजकुमारी को भी रानी के समान ही समझा था !

पात्र-परिचय

रानी	उच्च के दुर्गपति की पत्नी।
सुमेरराज	उच्च का दुर्गपति।
शालिनी	सुमेरराज की पुत्री।
शेरसिंह	उच्च का सेनापति।
मुहम्मद गोरी	यवन आक्रान्ता।
	सैनिक, दास-दासी आदि।



स्थान — उच्च के दुर्ग का एक प्रकोष्ठ।



समय — रात्रि का प्रथम पहर।

[प्रकोष्ठ सजा हुआ है। फ़र्श पर क़ीमती कालीन बिछा है और बैठने के लिए कई छोटी-छोटी चौकियाँ पड़ी हैं। सामने की चौकी अपेक्षाकृत बड़ी है। प्रकोष्ठ में रत्न-जटित दीप जल रहे हैं जिनके प्रकाश से कक्ष जगमगा रहा है। चिन्तित मुद्रा में सुमेरराज टहल रहे हैं। वे अधेड़ अवस्था के हैं। दाहिने द्वार से दास का प्रवेश]

दास : (झुककर अभिवादन करता हुआ) सेनापति शेरसिंह जी उपस्थित होना चाहते हैं, महाराज!

[सुमेरराज स्वीकृति-सूचक सर हिला देते हैं। दास चला जाता है और एक क्षण बाद ही शेरसिंह आता है। वह अस्त्र-शस्त्र धारण किए है। आयु लगभग ३० वर्ष है। कठोर आकृति तथा मुख पर के घावों के चिन्ह उसकी युद्ध-प्रियता तथा वीरता के द्योतक हैं।]

सुमेरराज : (चिन्तित स्वर में) सब व्यवस्था ठीक है?

शेरसिंह : जी हाँ! यद्यपि गोरी की सेना संख्या में हमसे कहीं अधिक है, फिर भी हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं है। दुर्ग के द्वार पर मैंने विश्वस्त सैनिक नियुक्त कर दिए हैं। मैं स्वयं रात-भर निरीक्षण करता रहूँगा।

सुमेरराज : (बड़ी चौकी पर बैठते हुए) ठीक है। हमें अपने ही पैरों

पर खड़ा होना है। दूसरों से सहायता की आशा करना व्यर्थ है।

शेरसिंह : (छोटी चौकी पर बैठकर) आप ठीक कह रहे हैं। यदि हममें एकता होती और यदि हम पारस्परिक सहयोग के साथ शत्रु का सामना करते तो आज देश की यह दशा न होती। यहाँ तो बस, अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग है।

सुमेरराज : यही तो दुख का विषय है। शेरसिंह, तुम उच्च के सेनापति हो। दुर्ग की रक्षा का भार तुम पर है। क्या···क्या मैं तुम्हारे खड्ग पर विश्वास कर सकता हूँ?

शेरसिंह : (खड़ा होकर म्यान से खड्ग निकालता है और फिर उसे ऊपर उठाते हुए कहता है) जब तक इस हाथ में खड्ग है महाराज, तब तक शत्रु के अपावन चरण दुर्ग की पवित्र रज को कलुषित न कर सकेंगे।

सुमेरराज : मुझे विश्वास है तुम पर, किन्तु···

[सुमेरराज की बात अधूरी रह जाती है। कक्ष में रानी का प्रवेश। वह सुन्दर है। शेरसिंह आदर से सर झुकाता है। रानी सुमेरराज के पास ही बैठ जाती है। शेरसिंह भी खड्ग म्यान में रखकर बैठ जाता है।]

रानी : युद्ध का क्या समाचार है, सेनापति?

शेरसिंह : शत्रु-सेना दुर्ग को घेरे पड़ी है। कदाचित् वह आक्रमण की योजनाएँ बना रही है।

रानी : रक्षा की क्या व्यवस्था है?

सुमेरराज : तुम चिन्ता न करो, रानी! हमने सब प्रबन्ध कर लिया है। शत्रु हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। वर्षा-काल निकट है। यदि दस-बीस दिन हम डटे रहे तो वर्षा में शत्रु-सेना नष्ट-भ्रष्ट हो जाएगी और···

रानी : (बीच में ही) तब तो शीघ्र ही आक्रमण होगा।

सुमेरराज : युद्ध मे बाहरी शत्रु से इतना भय नहीं होता रानी, जितना घर के भेदिए से। इधर कुछ दिनों से मुझे सन्देह···

शेरसिंह : (उत्सुकता से) क्या सन्देह हो रहा है आपको ?

सुमेरराज : यही कि हमारे बीच कोई शत्रु का भेदिया है। हमारी गुप्त-से-गुप्त योजनाएँ गोरी को विदित हो जाती हैं।

रानी : यह तो बहुत बुरा है। आपने पता लगाने की चेष्टा की ?

सुमेरराज : कर रहा हूँ, पर कुछ पता नही लगता। किस पर विश्वास करूँ और किस पर अविश्वास, कुछ समझ मे नही आता। सच तो यह है कि मुझे स्वयं अपने ऊपर ही विश्वास नहीं रहा है!

शेरसिंह : आप चिन्ता न करें, महाराज! मैं दो-एक दिन में उस भेदिए का सर इन चरणों में ला दूंगा। काश! आपने पहले कुछ सकेत किया होता!

सुमेरराज : कई बार सोचा, पर मौन रहा। शेरसिंह, यवनों का इतिहास छल-छद्म की कहानी है। युद्ध मे असफल होकर कूटनीति का आश्रय लेना उनके लिए एकदम कठिन नही है। मुझे भय है कि···

शेरसिंह : महाराज!

सुमेरराज : शेरसिंह, मुझे भय है कि कही उच्च को पराजित करने में भी यही मार्ग न अपनाया जाए।

शेरसिंह : आपका भय निर्मूल नहीं है, महाराज! हमें अत्यन्त साव-धान रहना चाहिए।

रानी : अवश्य! हाँ सेनापति, गुप्त द्वार की रक्षा का भी प्रबंध कर दिया है आपने ?

शेरसिंह : (हँसकर) उसकी क्या आवश्यकता है? दुर्ग के गुप्त मार्ग का भेद हम तीनों के अतिरिक्त और कोई नहीं

जानता। यदि हम वहाँ सैनिकों की नियुक्ति करते हैं तो भेद खुल जाएगा और शत्रु का भेदिया इस ज्ञान से अनुचित लाभ उठा लेगा।

रानी : विचार तो ठीक है, परन्तु...

[सुमेरराज उठ खड़े होते हैं। रानी और शेरसिंह भी खड़े हो जाते हैं।]

सुमेरराज : वैद्यराज ने मुझे अधिक न जागने का परामर्श दिया है। मैं जा रहा हूँ शयन करने। शेरसिंह, तुम सावधान रहना आज की रात!......ओह! न जाने क्यों हृदय काँप जा रहा है।

शेरसिंह : आप विश्राम करें। मैं सजग रहूँगा।

सुमेरराज : तुम अभी विश्राम न करोगी, रानी?

रानी : आप जाएँ, मैं सेनापति के साथ कुछ परामर्श करूँगी।

[सुमेरराज हँसकर चले जाते हैं। रानी बड़ी और शेरसिंह छोटी चौकी पर बैठ जाते हैं।]

रानी : दो-एक-दिन में शत्रु के भेदिए का सर महाराज के चरणों में डालने का प्रण पूरा कर सकोगे, सेनापति?

शेरसिंह : क्यों नहीं।

रानी : (हँसकर) चाहे वह उच्चाधिकारी ही क्यों न हो?

शेरसिंह : तब तो उसका अपराध भी महान् हो जाएगा।

रानी : (सहास्य) बहुत साहसी और स्वामिभक्त हो, सेनापति! निकालो अपना खड्ग और काट लो मेरा सिर! मैं ही तुम्हारी अपराधिनी हूँ।

शेरसिंह : (हँसकर) आप परिहास कर रही हैं, महारानी!

रानी : (उठकर टहलते हुए) मैं सत्य कह रही हूँ, सेनापति!

शेरसिंह : (उठकर) महारानी।

रानी : (हँसकर) हमें तुम्हारे जैसे स्वामिभक्तों की आवश्यकता

है, सेनापति ! मैं महत्वाकांक्षिणी हूँ। सभी को होना चाहिए । क्या तुम महत्वाकांक्षी नहीं हो, सेनापति ?

शेरसिंह : महारानी ! मैं···मैं···

रानी : (बीच में उसकी ओर प्रेम-दृष्टि से देखती हुई) मैं तुम्हारी उन्नति चाहती हूँ । सेनापति के पद पर ही सन्तुष्ट रहना मूर्खता है । मेरी सहायता करो और स्वर्ण तथा सुन्दरी तुम्हारे चरणों पर लोटेंगी । अच्छा, क्या तुम दुर्गपति बनना नहीं चाहते ?

शेरसिंह : बहुत हो चुका, महारानी ! मैं आपकी परिहास-प्रियता की प्रशंसा करता हूँ, पर···पर यह परिहास का समय नहीं है।

रानी : स्वामी की सेवा करते-करते तुम पूरे सेवक बन गए हो। मैं तुम्हें स्वामी बनाना चाहती हूँ। उच्च के दुर्ग को तुम्हारे जैसे योद्धा की आवश्यकता है। वैद्यराज की औषधियों के बल पर जीवित रहने वाले व्यक्ति के दुर्बल हाथों में शासन-भार सँभालने की शक्ति कहाँ !

शेरसिंह : (तीव्र स्वर में) मैं महाराज के विरुद्ध एक भी शब्द नहीं सुन सकता । मेरा कार्य···

रानी : (बीच में ही) अपने को पहचानो, शेरसिंह ! (आगे बढ़कर उसके समीप आते हुए) मेरी सहायता करने में तुम्हें घाटा नहीं रहेगा। गोरी को मेरी सहायता प्राप्त है। तुम्हारी सहायता के बिना भी मेरा काम चल जाएगा, पर मैं ··मैं···

शेरसिंह : (आवेश से) मुझसे विश्वासघात न हो सकेगा, महारानी ! मुझे जाने की आज्ञा दें !

[शेरसिंह द्वार की ओर बढ़ता है। रानी हँसती है। द्वार से कई सैनिक आकर शेरसिंह को घेर लेते हैं। वह म्यान

से खड्ग निकालना चाहता है पर सैनिक उसे निरस्त्र कर देते हैं। वह घृणा से महारानी की ओर देखता है। रानी हँसती हैं।]

रानी : देखा मेरा बल ? तुम्हारे सैनिक ही तुम्हारे विरुद्ध हैं। बोलो, मेरी सहायता करके दुर्ग के स्वामी बनना चाहते हो या कुत्तों की मौत मरना चाहते हो ? महाराज को यह समझाना कि तुम्हीं शत्रु के भेदिए थे, कुछ कठिन न होगा। वे तुम्हारी मृत्यु से हर्षित ही होंगे।

[शेरसिंह सर झुकाए खड़ा रहता है।]

रानी : सोच लो ! एक ओर स्वर्ण है, वैभव है, राज्य है और दूसरी ओर अपयश है, यंत्रणा है, मृत्यु है।

शेरसिंह : (सर उठाकर) मैं एकान्त में उत्तर दूँगा।

[रानी के संकेत से सब सैनिक बाहर चले जाते हैं। रानी अपने स्थान पर बैठ जाती है। शेरसिंह भी बैठता है।]

शेरसिंह : (मन्द स्वर में) आप जीतीं और मैं हारा। मैं आपका सेवक हूँ।···मुझे क्या करना होगा ?

रानी : मेरे साथ विश्वासघात करके तुम जीवित नहीं रह सकते। इसलिए यदि किसी छल का आश्रय लेने का विचार हो तो उसे हृदय से निकाल दो। मेरा साथ दो ! जो मैं कहूँ सो करो और बदले में तुम्हें दुर्ग मिलेगा, धन मिलेगा, राज्य मिलेगा और···

शेरसिंह : और ?

रानी : और यदि चाहो तो रानी भी मिल सकती है।

[शेरसिंह रानी की ओर देखता है। रानी की आँखों में मादक मुस्कान है। उसकी मुद्राएँ मिटने का निमन्त्रण दे रही हैं।]

शेरसिंह : बिना रानी के राज्य किस काम का ?

रानी : (हँसकर) तब मैं भी तुम्हारी हूँ। रुको, पर अभी नहीं। अभी तो मैं किसी और की पत्नी हूँ। पहले मुझे इस बन्धन से मुक्त करो।

शेरसिंह : क्या ?

रानी : हाँ ! (कंचुकी से विषाक्त कटार निकालकर) यह लो मेरी कटार ! महाराज का शयन-कक्ष तो तुम जानते ही हो ?

शेरसिंह : (पीछे हटकर) नहीं, यह कुत्सित कार्य मुझसे नहीं हो सकेगा। मैं सैनिक हूँ। किसी सोते हुए व्यक्ति की हत्या मैं···ओह ! नहीं ! नहीं !

रानी : (गम्भीरता से) यह मेरी कटार है, शेरसिंह ! तुम्हारा खड्ग तो शुद्ध ही रहेगा। शीघ्रता करो ! विलम्ब होने से काम बिगड़ जाएगा।

शेरसिंह : (कटार लेकर) पर···

रानी : शीघ्र जाओ। गोरी के आने का समय हो रहा है। उसके आने से पूर्व दुर्ग का शासन तुम्हारे हाथों मे आ जाना चाहिए।

शेरसिंह : (आश्चर्य से) गोरी ?

रानी : हाँ, गोरी, मैं गुप्त द्वार खोल दूगी। गोरी दुर्ग में प्रविष्ट होकर तुम्हे दुर्गपति बनाएगा और···

शेरसिंह : और ?

रानी : और शालिनी से विवाह करके उसे अपने साथ ले जाएगा। मेरी बेटी गोरी की पत्नी बनेगी। जाओ, अब देर न करो।

शेर सिंह : (शंका से) कही वह अपना वचन भूल न जाए ?

रानी : नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। एक-एक पल बहुमूल्य है।

जाओ ! शयन-कक्ष के रक्षक तुम्हें नहीं रोकेंगे। वे मेरे सहायक हैं।

[शेरसिंह बाहर चला जाता है। उसके जाते ही दूसरा सैनिक अन्दर आता है। रानी उसे शेरसिंह के पीछे जाने का संकेत करती है। वह तीव्रगति से चला जाता है। बाईं ओर के द्वार से शालिनी आती है। वह यौवन तथा सौन्दर्य की सजीव प्रतिमा है।]

शालिनी : (आश्चर्य से) आप अभी तक अपने शयन-कक्ष में नहीं गईं, माता जी ? पिता जी कहाँ हैं ?

रानी : (व्यग्रता से) वे अपने कक्ष में हैं। सेनापति शेरसिंह उनसे परामर्श करने गए हैं। मैं उन्हीं की प्रतीक्षा कर रही हूँ। ···तुम अभी तक नहीं सोईं ?

शालिनी : नहीं, माता जी ! आज जैसे निद्रा रूठ गई है।

रानी : यह लक्षण अच्छे नहीं। जाओ अपने कक्ष में !

[शालिनी जाने के लिए मुड़ती है। तभी नेपथ्य से एक चीख आती है। फिर निस्तब्धता छा जाती है। शालिनी घबराकर रानी की ओर देखने लगती है। हाथ में रक्त-रंजित कटार लिए शेरसिंह का प्रवेश। उसकी भयंकर वेश-भूषा देखकर शालिनी के मुख से धीमी-सी चीख निकल जाती है।]

शेरसिंह : सम्पूर्ण कार्य निर्विघ्न समाप्त हो गया, महारानी ! महाराज अब अनन्त निद्रा में निमग्न हैं।

शालिनी : (चीखकर) विश्वासघाती ! हत्यारे ! नीच !

[नंगी तलवारें लिए आठ-दस सैनिकों का प्रवेश।]

रानी : (भयंकर स्वर में) बन्दी बना लो महाराज के हत्यारे को !

[सैनिक झपटकर शेरसिंह को बन्दी बना लेते हैं।]

शेरसिंह : यह विश्वासघात कैसा ?

रानी : (हँसकर) विश्वासघात ? तू क्या दुर्गाधिपति बनने के स्वप्न देखने लगा था ? मूर्ख ! मेरी महत्वाकांक्षा की एक सीढ़ी-मात्र था तू !

शेरसिंह : इस छल का बदला अवश्य मिलेगा। (छुड़ाने की चेष्टा करते हुए) छोड़ दो मुझे ! इस विश्वासघातिनी और देशद्रोहिनी का गला इन्हीं हाथों से घोंटकर ही मैं शांति से मर सकूँगा।

रानी : (तीव्रता से) ले जाओ इसे और फेंक दो दुर्ग से नीचे !
[छः सैनिक उसे ले जाते हैं। रानी शालिनी का हाथ पकड़कर बड़ी चौकी पर अपने ही साथ बिठा लेती है। दो क्षण बाद नेपथ्य से एक चीख आती है। फिर शान्ति छा जाती है।]

रानी : गुप्त द्वार खोल दिया है ?

एक सैनिक : जी हाँ ! कुछ सैनिक वहीं खड़े हैं।

रानी : ठीक है। ···मण्डप इत्यादि बन गया है ?

सैनिक : जी हाँ !

रानी : जाओ और स्वर्गीय महाराज की अन्तिम क्रिया का प्रबन्ध करो। किसी को उनकी मृत्यु का वास्तविक कारण ज्ञात न हो। किसी भी दशा में वैद्यराज उनके पास न जाने पाएँ।
[सैनिक सिर झुकाकर चले जाते हैं।]

शालिनी : मैं स्वप्न देख रही हूँ या जागती हूँ, माँ ?

रानी : (मृदु स्वर में) तू जाग रही है, बेटी ! तेरे ही सुख और भविष्य के लिए मैं यह सब कर रही हूँ।

शालिनी : मेरा भविष्य ?

रानी : हाँ ! अब तू मुहम्मद ग़ोरी जैसे साहसी और वीर पुरुष

की पत्नी बनेगी। गोरी ने मुझसे विवाह करने का वचन दिया है।

शालिनी : वचन ?

रानी : हाँ, बेटी ! इसी सौदे पर ही तो मैं तैयार हुई थी। दुर्ग का गुप्त द्वार भी खोल दिया और महाराज को भी मार्ग से हटा दिया।

शालिनी : (उठकर) मैं जन्म लेते ही मर क्यों न गई ? आपने मेरे लिए—केवल इसलिए कि मैं गोरी की दासी बन सकूँ - इतना महँगा सौदा किया है ? देश के साथ द्रोह, पति की हत्या, शेरसिंह के साथ विश्वासघात ! आपको माता कहने में भी मुझे लज्जा आती है।

रानी : यह क्या कह रही है तू ?

शालिनी : ठीक कह रही हूँ। क्या आप समझती हैं कि मैं गोरी से विवाह कर लूँगी ? कदापि नहीं। इससे पूर्व कि उसका स्पर्श मुझे अपावन करे, मैं···

[कक्ष में गोरी का प्रवेश। उसके साथ दस-बारह यवन सैनिक हैं।]

मुहम्मद गोरी : शुक्रिया, रानी साहिबा ! किला अब हमारा है। हमारा परचम लहरा रहा है बुलन्द मीनार पर। (शालिनी की ओर देखकर) तो यह है हसीन छोकरी। बहुत खूब ! जमीन पर गोया चाँद उतर आया है।

रानी : (आदर से) इस प्रशंसा के लिए धन्यवाद ! मण्डप तैयार है। चलिए, शीघ्र विवाह हो जाए।

मुहम्मद गोरी : (हँसकर) बहुत भोली हो तुम ! क्या तुमने यकीन कर लिया था कि मैं तुम्हारी दुख्तर से शादी कर लूँगा ? तोबा, तोबा ! एक काफ़िर लड़की से शादी !

रानी : (घबराकर) ऐसी हँसी ठीक नहीं ! मैंने अपना वचन

पूरा कर दिया। अब आपकी बारी है।

मुहम्मद गोरी : करूँगा, ज़रूर करूँगा। यह नाज़नीन मुझे पसन्द है। (कठोर स्वर में) पर मैं इसे मलिका नहीं, बाँदी बनाऊँगा। यह मेरे हरम में रहेगी।

रानी : (क्रुद्ध स्वर में) विश्वासघाती! कुत्सित! नीच!

मुहम्मद गोरी : (हँसकर) मैं गालियों का बुरा नहीं मानता। (एक सैनिक की ओर मुड़कर) इन्हें कैद कर लो।

[दो सैनिक रानी को बन्दी बना लेते हैं।]

मुहम्मद गोरी : (शालिनी से) चलो, जानेमन! आज की फ़तहयाबी की खुशी में मेरी आगोश तुम्हीं आबाद करो!

शालिनी : (भयंकर स्वर में) चुप रह, कुत्ते! मैं भारतीय नारी हूँ। मुझे अबला न समझ! मुझे छूने से पहले तू भस्म हो जाएगा।

मुहम्मद गोरी : गुस्सा तुम्हारे हुस्न में चार चाँद लगा देता है। मुझे तेज लड़कियाँ ही पसन्द हैं।

शालिनी : अभी तेजी कहाँ देखी तूने! यदि साहस है तो आगे बढ़कर देख!

मुहम्मद गोरी : (हँसकर) खूब! बहुत खूब! अब समझा। माँ के सामने शर्म आती है। (सैनिकों से) ले जाओ इसकी माँ को!

[रानी चीखती-चिल्लाती है, पर सैनिक उसे पकड़कर बलपूर्वक बाहर ले जाते हैं। गोरी के संकेत से अन्य सैनिक भी चले जाते हैं।]

मुहम्मद गोरी : (आगे बढ़कर) अब हम तनहा हैं। आओ और अपनी नाजुक बाहें मेरे गले में डाल दो! अपने होंठों की शराब से मुझे मदहोश कर दो!

शालिनी : तू भूलता है। ये बाहें तेरे लिए फाँसी का फन्दा हैं, ये

अधर विपाक्त है ।

मुहम्मद गोरी : *मैं थका सिपाही हूँ । नाज-नखरे उठाने की ताब नहीं। आओ, आगे बढ़ो !*

[गोरी शालिनी को पकड़ने के लिए आगे बढ़ता है। शालिनी पीछे हटकर कमर में छिपी हुई छोटी-सी कटार निकाल लेती है ।]

मुहम्मद गोरी : इसकी क्या जरूरत है ? मुझे मारने के लिए तो तीरे-नजर ही काफ़ी है ।

शालिनी : तेरे कलुषित रक्त से मैं अपनी पवित्र कटार अपवित्र न करूंगी । तू स्वयं ही कुत्तों की मौत मरेगा।

मुहम्मद गोरी : *बातूनी छोकरी ! मेरे मजे को न बिगाड़ !*

[गोरी शालिनी को पकड़ने के लिए भूखे भेड़िया के समान झपटता है। वह बचकर बड़ी चौकी पर चढ़ जाती है और विद्युत्-वेग से कटार अपने सीने में भोंक लेती है। रक्त की धारा बह चलती है और उसका निर्जीव शरीर चौकी पर गिर जाता है । कटार छूटकर दूर गिरती है । गोरी झिझककर रुक जाता है । फिर वह आगे बढ़कर शालिनी की नाड़ी देखता है । एक क्षण बाद वह उसके अंचल से उसका मुख ढंकता है । धीरे-धीरे यवनिका गिरती है ।]

सुहाग रात

[ऐतिहासिक एकांकी]

उसकी सुहाग रात शयन-कक्ष में नहीं, अग्नि-शैय्या पर हुई क्योंकि यदि प्यार को भावी पति का जीवन प्रिय था तो कर्तव्य को उसकी मृत्यु !

पात्र-परिचय

वीरमती	देवगिरि के स्वर्गीय सेनापति की पुत्री ।
गौरी	देवगिरि की राजकुमारी ।
कृष्णराव	एक मराठा सरदार ; वीरमती का भावी पति ।
रामचन्द्रदेव	देवगिरि-नरेश ।
रानी	देवगिरि की महारानी ।
	दास-दासी, आदि ।

⊙

स्थान — देवगिरि के राज-प्रासाद का एक प्रकोष्ठ ।

⊙

समय — सन् १२९४ ई० की एक सन्ध्या ।

[प्रकोष्ठ वर्गाकार है। पीछे एक खिड़की है जिस पर जालीदार बहुमूल्य पर्दा पड़ा हुआ है जो कभी-कभी पवन के झकोरों में उड़ जाता है और बाहर का रक्ताभ आकाश दिखाई देने लगता है। दाहिनी ओर एक द्वार है जो खुला हुआ है। मध्य में एक रजत-पर्यंक पड़ा है जिस पर बहुमूल्य रेशमी बिस्तर बिछा है। एक कोने में वीणा रखी है। द्वार के सामने की दीवार पर भगवान कृष्ण का चित्र है। खिड़की के ऊपर एक वृद्ध व्यक्ति का चित्र है। द्वार के ऊपर भगवान राम का और खिड़की के सामने की भीति पर रामचन्द्रदेव तथा रानी के चित्र हैं। भगवान भास्कर की अन्तिम किरणें खिड़की से आकर देवगिरि नरेश तथा उसकी पत्नी के चित्रों पर पड़ रही हैं। प्रकोष्ठ में पूर्णतया शान्ति है। एक अष्टदश-वर्षीया कुमारी खिड़की के समीप खड़ी होकर दूर के लहलहाते खेतों की ओर एकटक देख रही है। उसकी काली लम्बी वेणी पतली कटि पर झूलती हुई नितम्बों के नीचे तक चली गई है। इस युवती का नाम वीरमती है। खुले द्वार से राजकुमारी गौरी का प्रवेश। वह वीरमती की समवयस्का है और सुन्दर भी उसी के समान है।]

गौरी : *आज उदास क्यों हो, दीदी? पिता जी याद आ रहे हैं?*

वीरमती : (घूमकर) कौन, गौरी ? नहीं ! महाराज और महारानी के अतुल स्नेह को पाकर मैं अपने माता-पिता को भूल-सी गई हूँ। मुझे स्वप्न में भी यह विचार नहीं आता कि उनके अतिरिक्त मेरे कोई अन्य माता-पिता भी थे।

गौरी : (हँसकर) अच्छा ! तो तुम्हें अपने पिता का ध्यान कभी नहीं आता ?

वीरमती : आए भी क्यों, गौरी ? जब दो वर्ष की थी, तभी माता चल बसीं और एक वर्ष के पश्चात ही पिता जी भी अनन्त निद्रा में निमग्न हो गए। तब से यहीं, तुम्हारे इस राज-प्रासाद में ही रह रही हूँ। तुम्हीं को अपनी बहन, महाराज को पिता और महारानी को ही माता समझा है। जैसा अपनत्व मुझे तुम लोगों से मिला, वैसा तो अपने सगे-सम्बन्धियों से भी किसी को न मिलता होगा। महाराज और महारानी की दृष्टि में हम दोनों समान हैं। मुझमें और तुममें कभी कोई अन्तर नहीं देखा उन्होंने। तुम मुझे दीदी कहती हो और एक राजकुमारी के सदृश ही समस्त सुख-साधन मुझे प्राप्त हैं। फिर…

गौरी : (बीच में ही टोककर) फिर इस उदासी का कारण ? अच्छा, समझ गई। जीजा जी की याद आ रही है !

वीरमती : (लजाकर) धुत पगली ! याद तो उसकी आती है जो अपने से दूर हो। वे तो मेरे रोम-रोम में बसे हैं।

गौरी : फिर भी दीदी, अब कब तक इस प्रकार चकोरी के समान दूर रहोगी अपने चन्द्र से ! मैं आज ही कहूँगी पिता जी से कि अब शीघ्र-से-शीघ्र यह विवाह हो जाना चाहिए।

धीरमती : तुम्हें कहाँ से आ गई ये बातें ? किसी महादेव से तो शिक्षा नहीं लेने लगी हो ?

गौरी : महादेव नहीं दीदी, कृष्णराव कहो। यह नाम लेते हुए क्या लज्जा आती है ?

धीरमती : अपने प्राणप्रिय प्राणेश्वर का नाम लेने में किस बात की लज्जा, पगली ! पर मैं तो तुम्हारे विषय में कह रही थी।

गौरी : मेरे विषय में ? मैं तो नित्य ही प्रातःकाल उठकर भगवान विष्णु से प्रार्थना करती हूँ कि जल्द ही मेरी दीदी का विवाह हो, मैं उनका शृंगार करूँ, तारों से माँग भरकर उन्हें रति से भी अधिक सुन्दर बना दूँ, और फिर प्रथम मिलन की रात आए और······

धीरमती : बस-बस, रहने दो ! मालूम होता है तुम्हारा मस्तिष्क फिर गया है, तभी ऐसी बहकी-बहकी बातें कर रही हो। माता जी से मुझे कहना ही पड़ेगा अब।

गौरी : (घबराकर) क्या ?

धीरमती : (बनावटी गम्भीरता से) कि गौरी के लिए किसी योग्य वर की खोज करनी चाहिए।

[लज्जा की लाली गौरी के गोरे गालों पर फिर आती है। वह आँखें झुका लेती है। कुछ उत्तर नहीं देती।]

धीरमती : (हँसकर) लजा गई, पगली ! अच्छा, छोड़ो इन बातों को। गौरी, आज दोपहर से ही न जाने क्यों मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है ! किसी अज्ञात शंका से बार-बार काँप उठती हूँ। भय की भावना हृदय में भरी जा रही है।

गौरी : (घबराकर) क्यों ? स्वास्थ्य तो ठीक है, दीदी ?

धीरमती : अस्वस्थ मैं नहीं हूँ, गौरी ! पर फिर भी न जाने क्यों हृदय बैठा-सा जा रहा है। कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

गौरी : तुम्हें विश्राम की आवश्यकता है, दीदी !

[पर्यंक पर दोनों बैठ जाती हैं।]

वीरमती : *विश्राम कहाँ ? गति का नाम ही जीवन है।*

गौरी : तुम सचमुच अस्वस्थ हो।...गीत सुनाऊँ ?

वीरमती : सुनाओ ! अपना वही प्रिय गीत सुनाओ, गौरी ! कदाचित् उसी से कुछ शान्ति मिले।

[गौरी वीणा लेकर फ़र्श पर बिछे बहुमूल्य कालीन परबैठ जाती है। तभी एक दासी आकर प्रकोष्ठ के दीप जला जाती है। गौरी की चपल उँगलियाँ तारों पर नृत्य करने लगती हैं।

लेकर आई साँझ उदासी !
हृदय-भवन में बसा कौन यह मनहर मौन प्रवासी ?
किसकी सुधि का चुभा तीर यह ?
क्यों सखि, जागी सुप्त पीर यह ?
भर-भर आए नयन, प्राण में कैसी उठी व्यथा-सी ?
तारों के मिस अम्बर रोया ;
अवनी ने जीवन-धन खोया ;
विरह-ज्वाल में भस्म हुए जाते हैं मन के वासी !

[संगीत रुक जाता है। वीरमती एक गहरा निःश्वास छोड़ती है। गौरी उठकर वीणा उसी कोने में रख देती है। खुले द्वार से सैनिक वेश में एक नवयुवक का प्रवेश। अवस्था लगभग २५ वर्ष, साँवला रंग, भव्य मुख पर सुन्दर दाढ़ी; यह मराठा सरदार कृष्णराव है।]

गौरी : (कृष्णराव को आते देखकर) अब मैं चली, दीदी ! माता जी याद कर रही होंगी।

[कृष्णराव पर एक सस्मित दृष्टि डालती हुई गौरी उसी द्वार से चली जाती है। वीरमती खिड़की के समीप जाकर खड़ी हो जाती है।]

कृष्णराव : वीरू ! क्या रुष्ट हो आज अपने इस कृष्ण पर ?

[वीरमती न तो बोलती है और न उसकी ओर मुख ही करती है। कृष्णराव उसके समीप जाकर उसका मुख अपनी ओर करता है। उसकी चिबुक ऊपर उठाते हुए उसकी आंखों में अपनी आँखें डाल देता है।]

कृष्णराव : प्रिये ! इधर देखो ! इन आँखों में देखो ! आज प्रातः-काल से ये तुम्हारे दर्शन के लिए असहाय मीन की भाँति तरस रही हैं और तुम—तुम अब मान कर रही हो ! हँसो ! एक बार मुस्करा दो ! रूप-सरोवर में अपने युग-दृग्-कमल विकसित हो जाने दो !

वीरमती : (उदास स्वर में) आज तक जानती थी कि आप युद्ध-कला मे निपुण हैं पर आज विदित हुआ कि असत्य-भाषण मे भी आप समान ही पटु हैं ।

कृष्णराव : असत्य भाषण ? यह तुम क्या कह रही हो वीरू ?

वीरमती : यदि प्रातःकाल से ही आपकी आँखें मेरे दर्शन के लिए व्याकुल होती तो यह जानते हुए कि आपको देखे बिना मैं क्षण-भर भी जीवित नहीं रह सकती, आज दिन-भर आप मुझे भयंकर मृत्यु-यंत्रणा सहने के लिए इस प्रकार न छोड़ देते ।

कृष्णराव : (हँसकर) समझा ! तो यह है तुम्हारे मान का कारण । पर वीरू ! तुम नहीं जानती, आज दिन-भर मैं कितना व्यस्त रहा ।

वीरमती : आपकी यह व्यस्तता किसी दिन मेरे प्राण ले लेगी । दो माह से आप इसी प्रकार व्यस्त हैं । पहले तो यवन अला-उद्दीन के आक्रमण रोकने में व्यस्त थे आप, पर अब किस कार्य ने आपको मेरे पास तक न आने को विवश कर दिया है ?

कृष्णराव : कारण अभी बदला नहीं है, वीरू !

वीरमती : यह क्या कह रहे हैं आप ? अभी एक सप्ताह पूर्व ही तो हमारी यवनों से सन्धि हुई है और चार दिन हुए यवन-सेना वापस भी लौट गई है। कल रात को ही तो देश में विजय-जयन्ती मनाई गई थी, गृह-गृह दीप जले थे, द्वार-द्वार पर बन्दनवार सजाए गए थे, आँगन-आँगन में मंगल-गान हुए थे।

कृष्णराव : आज दोपहर तक हमारा यही विश्वास था कि यवन-सेना चली गई है पर आज ही गुप्तचरों ने समाचार दिया है कि वह केवल एक छल था। हमें भुलावे में डालने के लिए यवन-सेना यहाँ से चली अवश्य गई थी पर अब गुप्त रूप से वह पुनः समीप के वन मे आ गई है और आक्रमण की योजनाएँ बना रही है।

वीरमती : यह तो भारी धोखा है, विश्वासघात है।

कृष्णराव : इस समाचार से हम सभी विन्तित हो उठे हैं। सभा-भवन में अभी एक गुप्त मंत्रणा हुई थी। महाराज ने इस समाचार की सत्यता का निश्चय करने की मुझे आज्ञा दी है।

वीरमती : आप यह कार्य···

कृष्णराव : (बीच में ही रोककर) इस कार्य के लिए मुझे अभी गुप्त रूप से उस वन मे जाना है। मैं विदा लेने आया हूँ, वीरू !

वीरमती : (घबराकर) पर यह कार्य तो भयंकर है। अकेले ही···

कृष्णराव : चिन्ता न करो, वीरू ! तुम्हारा स्नेह मेरी रक्षा करेगा। कार्य कठिन अवश्य है, पर देश और जन्मभूमि के लिए···

वीरमती : यह प्रस्ताव आपका था या महाराज ने आज्ञा दी है ?

कृष्णराव : मैंने स्वयं इस कार्य को करने का बीड़ा उठाया है।

वीरमती : (कम्पित स्वर में) यदि महाराज ने आज्ञा दी होती तो

उनसे विनती करके मैं इस आज्ञा को रद्द करवा देती। पर अब क्या होगा! मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है।

[वीरमती अपना सिर कृष्णराव के वक्ष पर टिका देती है। कृष्णराव उसके सिर पर स्नेह से हाथ फेरता है।]

कृष्णराव : एक वीर क्षत्राणी को यह कातरता शोभा नहीं देती, भीरू! उत्तरा ने भी अभिमन्यु को विदा दी थी। फिर मैं किसी द्रोण का चक्रव्यूह भंग करने तो जा नहीं रहा हूँ जो तुम इतनी व्याकुल हो रही हो।

वीरमती : (सिर उठाकर अश्रुपूर्ण नयनों से) मैं अपना कर्त्तव्य जानती हूँ, नाथ! पर फिर भी अदृश्य अनिष्ट की आशंका से बार-बार काँप उठती हूँ। क्या किसी प्रकार आज यह कार्य स्थगित नहीं किया जा सकता? आप कल जा सकते हैं।

कृष्णराव : एक क्षण का विलम्ब भी देश के लिए कितना भारी पड़ेगा, इसका अनुमान कदाचित् तुम्हें नहीं है, भीरू! परमात्मा के लिए अब देर न करो और स्मित-पूर्ण नयनों से मुझे विदा दो।

वीरमती : जब रोक नहीं सकते, तब रोकने का असफल प्रयत्न भी मैं न करूँगी। जाइए! परमात्मा आपकी रक्षा करे! आप अपने कार्य में सफल होकर शीघ्र ही इन नयनों को कृतार्थ करें! (स्वर काँप जाता है।)

[कृष्णराव विद्युत्-वेग से चला जाता है। नेपथ्य में घोड़े की टाप सुनाई देती है। टापों का स्वर धीमा होता हुआ एकदम विलीन हो जाता है। वीरमती सहसा चौंक पड़ती है। अपने तकिये के नीचे से एक कटार निकालकर उसे खोलती है और दीप के प्रकाश में उसकी धार को परख करती है। फिर उसे म्यान में रखकर अपनी कटि में

साँस लेती है और तीव्र गति से वह भी बाहर चली जाती है। बाहर फिर घोड़े की टापों का स्वर आता है जो मन्द होता हुआ एकदम विलीन हो जाता है। तभी बाहर से 'वीरा-वीरा' कहते हुए महाराज रामचन्द्रदेव सपत्नीक आते हैं। दोनों बहुमूल्य वस्त्र तथा आभूषणों से सज्जित हैं। रामचन्द्रदेव की अवस्था लगभग ४० वर्ष और महरानी की उनसे ५ वर्ष कम है।]

रामचन्द्रदेव : यहाँ तो है नहीं, वीरा!

रानी : गौरी के पास होगी। आप विराजिये! इस नवीन समाचार ने तो आपको व्याकुल-सा कर दिया है।

रामचन्द्रदेव : हाँ रानी! हम क्षत्रिय युद्ध से नहीं डरते। मृत्यु हमारी सहचरी है। पर इस प्रकार विश्वासघात की आशा······

[बीच में ही रामचन्द्रदेव का हाथ पकड़कर रानी उन्हें पर्यंक पर बिठाते हुए स्वयं भी बैठ जाती है।]

रानी : इन यवनों से और किस प्रकार के व्यवहार की आशा की जा सकती है, नाथ! छल, प्रपंच, विश्वासघात तो जैसे इनके जातीय गुण हैं।

रामचन्द्रदेव : यदि यवन युद्ध ही चाहते थे तो क्या हम उन्हें देते नहीं? सन्धि करके इस प्रकार छल करने से उनका क्या प्रयोजन है?

रानी : प्रयोजन? एक स्वतन्त्र राष्ट्र-रमणी के मुक्ति-सुहाग को लूटने से बढ़कर उनके लिए और क्या पुण्य कार्य हो सकता है? और यह अलाउद्दीन? इसकी गति-विधि को तो देखकर ऐसा भास होता है कि अब उसका चाचा जलाल अधिक दिनों तक देहली के

सिंहासन पर नहीं बैठ सकता। यदि वह, उसकी हत्या करके सिंहासनारूढ़ हो जाए तो मुझे कुछ भी आश्चर्य नहीं होगा।

रामचन्द्रदेव : तुम्हारा अनुमान सत्य है, रानी! अलाउद्दीन जैसे नृशंस व्यक्ति के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।

रानी : कुमार शंकरराव भी यहाँ नहीं है। वह होता तो अलाउद्दीन को इस छल का मजा मिल जाता।

रामचन्द्रदेव : देवगिरि के अतुल वैभव और यहाँ की समृद्धि ने उसे अन्धा कर दिया है। वह हमारी सम्पदा लूटना चाहता है। कुशल हुई कि हमें समय पर सूचना मिल गई। कृष्णराव पता लगाने गया है।

रानी : जब तक देवगिरि में कृष्णराव जैसे स्वामिभक्त और स्वदेश-प्रेमी वीर हैं, तब तक इस स्वर्णभूमि पर शत्रुओं के अपावन चरण नहीं पड़ सकते।

रामचन्द्रदेव : जिस समय हम सब किंकर्तव्यविमूढ़ होकर बैठे थे, तब कृष्णराव ने स्वयं जाकर समाचार की सत्यता का पता लगाने का बीड़ा उठाया। उसकी प्रतिज्ञा से हम सन्तुष्ट हुए। हमें उसकी वीरता, निपुणता और देश-भक्ति पर विश्वास है।

रानी : भगवान उसके सहायक हों! उसके समान विश्वस्त सरदार अपने यहाँ विरले ही हैं। एक बार चाहे मुझे अपने पर अविश्वास हो जाये, पर उस पर अविश्वास मैं नहीं कर सकती।

रामचन्द्रदेव : तुम में मनुष्य को परखने की शक्ति है, रानी! तुम्हारे विचार जानकर मुझे प्रसन्नता हुई।

['दीदी', 'दीदी' कहती हुई गौरी आती है। वीरमती के स्थान पर माता-पिता को पाकर चकित रह जाती है।]

गौरी : (आदर भाव से) प्रमाण पिता जी ! प्रणाम माता जी !

रामचन्द्रदेव : प्रसन्न रहो, बेटी ! पर वीरा कहाँ है ? मैं तो समझता था कि वह तुम्हारे साथ होगी ।

गौरी : मैं तो दीदी को यहीं छोड़ गई थी, पिता जी ! कृष्णराव जी आए थे; मैं अपने प्रकोष्ठ में चली गई । अब जब आई तो दीदी के स्थान पर आप लोगों को पाया । आप जब यहाँ आए तब क्या दीदी नहीं थी ?

रान : नहीं, बेटी ! पर कहाँ हो सकती है ?

[तीनों चिन्तित हो उठते हैं । सहसा दूर से घोड़े की टाप का स्वर आता है । स्वर क्रमशः समीप आता जाता है और फिर थम जाता है ।]

रामचन्द्रदेव : (खड़े होकर) विदित होता है, कृष्णराव आ गया ।

[रामचन्द्रदेव द्वार की ओर बढ़ते हैं । उसी समय अस्त-व्यस्त वेश में वीरमती आती है । उसके बाल खुले हैं, पसीना बह रहा है, साँस तीव्र गति से चल रही है, वस्त्रों पर रक्त के दाग है, श्वेत माँग भी शोणित की लाली से कुछ लाल हो गई है ।]

रामचन्द्रदेव : (घबराकर) कुशल तो है, बेटी ?

वीरमती : कुशल कहाँ पिता जी ? यवन-सेना निकट के वन में है और शीघ्र ही आक्रमण होगा ।

रामचन्द्रदेव : (चिन्तित स्वर में) पर कृष्ण कहाँ है ? तुम कहाँ थी ?

वीरमती : वे आ रहे है । मैं उन्ही के पीछे-पीछे गई थी ।

[द्वार से कुछ दास आते हैं । वे कृष्णराव के मृत शरीर को उठाए हैं !]

रामचन्द्रदेव : हैं, यह क्या है ? किसने की इनकी यह दशा ? क्या यवनो ने यह दुस्साहस किया है ?

[वीरमती मौन रहती है । दास कृष्णराव के शरीर को

फ़र्श पर रखकर बाहर चले जाते हैं। गौरी चादर से शरीर ढँक देती है।]

रानी : बताओ बेटी, किस दुष्ट ने कृष्ण की हत्या की है?

धीरमती : मैंने!

[रानी और गौरी के मुख से चीख निकल जाती है।

रामचन्द्रदेव : (चकित स्वर में) यह क्या कह रही हो तुम? कृष्ण मृत्यु ने क्या तुम्हें पागल कर दिया है? संयत हो बताओ, कृष्ण की हत्या कैसे हुई?

धीरमती : (गंभीर वाणी में) पिता जी! मैं पागल नहीं हूँ। ही हूँ यह हत्यारिनी! शत्रु का भेद लेने के लिए यह गए तो इनकी रक्षा के विचार से मैं भी ... चली गई। किन्तु...किन्तु मुझे क्या पता था कि ... रक्षा के लिए मैं जा रही हूँ, उसी का वध करना पड़ेगा

रामचन्द्रदेव : मेरी समझ में तो कुछ नहीं आता। बेटी, तुमने भावी पति तथा स्वदेश-प्रेमी वीर का वध क्यों किया

धीरमती : ये मेरे भावी पति अवश्य थे, पर स्वदेश-प्रेमी ... वीर नहीं। इन्होंने आपके साथ, जाति के साथ, देश साथ विश्वासघात किया। यवनों को दुर्ग के गुप्त बताने गए थे यह! सोने के चन्द टुकड़ों पर इन्होंने आत्मा को बेच दिया था। ऐसे पतित, देश-द्रोही ... विश्वासघाती को जीने का अधिकार नहीं था।

रानी : बेटी!

धीरमती : हाँ माता जी, जिस यवन को इन्होंने भेद दिये थे ... हत्या करने के बाद मैंने पावन जन्म-भूमि के भाल इस कलंक को भी सदा के लिए मिटा दिया। पहले देश-भक्त हूँ, बाद में पत्नी! यदि प्यार को ... जीवन प्रिय था, तो कर्त्तव्य को मृत्यु! मैंने अपने